कुरुक्षेत्र

अक्टूबर : 1977 मूल्य : 50 पैसे

चलो गांव की ओर

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही देश में समाजवाद की स्थापना के गीत गाए गए। इसकी तरह-तरह की व्याख्याएं की गई। घोषणा पत्र जारी हुए, योजनाएं बनीं, बाहर से कर्ज ले लेकर तरह-तरह के कार्यक्रम शुरू किए गए, उद्योग-धन्धे खड़े हुए, हरित क्रांति आई तथा सामुदायिक विकास का दौर चला।

इसमें शक नहीं कि उत्पादन बढ़ा पर जिस अनुपात से जनसंख्या बढ़ी उस अनुपात से नहीं बढ़ा। वास्तव में देखा जाय तो हमारे इस तथाकथित समाजवादी आयोजन का परिणाम यह निकला कि गरीब और गरीब होते गए और अमीर और अमीर होते गए। तस्करी, चोरबाजारी रिश्वतखोरी तथा भ्रष्टाचार सर्वत्र व्याप्त हो गया। जहां एक ओर मद्यपान का जोर बढ़ा वहां दूसरी ओर चोरी-जारी आदि बुराइयां भी समाज में एक कोढ़ की तरह फैल गई। कानून और व्यवस्था की समस्या भी उभर कर सामने आई।

जहां तक गांवों का सम्बन्ध है, आज हमारे गांव शहरों के उपनिवेश मात्र बनकर रह गए हैं। हरित क्रान्ति से कुछ बड़े किसानों के पौ-बारह अवश्य हुए परन्तु अधिकांश ग्रामवासी बेरोजगारी का शिकार बन गए। नाई, धोबी, बढ़ई, कुम्हार आदि लोगों का धन्धा खत्म हो गया। वे गांव छोड़ छोड़कर रोजी-रोटी की तलाश में शहरों की ओर भागने लगे। इसके परिणाम स्वरूप एक ओर शहरों में सफाई, स्वास्थ्य तथा कानून और व्यवस्था की समस्या ने जोर पकड़ा वहां दूसरी ओर उन ग्राम वासियों को साफ-स्वच्छ जलवायु, शुद्ध खाद्य-पान तथा अच्छे रहन-सहन के अभाव में अपने सुन्दर स्वास्थ्य से हाथ धोने पड़े।

पंचायती राज की स्थापना तो हुई परन्तु पंचायतों की स्थापना के कारण जो झगड़े-फसाद हुए उनसे गांवों का वातावरण विषाक्त बना। जातिवाद और भाई-भतीजा वाद ने जोर पकड़ा। छुआछूत यथावत कायम रही। दहेज आदि बुराइयों का भी बोल बाला हुआ। शिक्षा और स्वास्थ्य भी बिगड़े। यह सब क्यों हुआ? नैतिकता की जिस दृढ़ भूमि पर हम खड़े थे उससे हमारे पैर उखड़ गए। गांधी जी ने हमें **'स्वदेशी'** का पाठ पढ़ाया था। जब वे दक्षिण अफ्रीका से लौटे तो उन्होंने अच्छी तरह समझ लिया था कि एक न एक दिन भारत आजाद होकर रहेगा और उस समय इस विशाल देश के लिए एक ऐसी अर्थव्यवस्था की जरूरत होगी जो इसकी अहम जरूरतों को पूरा कर सके। इसीलिए उन्होंने विकेन्द्रीकरण का सिद्धान्त हमारे आगे रक्खा। उनका रचनात्मक कार्यक्रम आर्थिक, सामाजिक तथा साम्प्रदायिक खाइयों को पाटने का उपक्रम था। उनका कहना था कि भारत गांवों में बसता है और देश का उत्थान गांवों के विकास पर ही निर्भर है। अपनी अर्थ रचना में उन्हें गांवों को स्वयं पूरित इकाई बनाना अभीष्ठ था। उनके **'ग्राम स्वराज्य'** की कल्पना यही है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा जो अपनी अहम जरूरत के लिए पड़ोसी पर निर्भर नहीं करेगा।

परन्तु बात-बात में गांधी जी की दुहाई तो दी जाती रही और प्रति वर्ष 2 अक्टूबर को उनकी समाधि पर फूल मालाएं भी चढ़ाई जाती रहीं परन्तु उनके सिद्धांत को बालाए ताक रख दिया गया। खुशी की बात है कि हमारी नई सरकार को गांधी जी की ये बातें याद आई हैं और हमारे कर्णधार अब उस ओर चल पड़े हैं। केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मन्त्री श्री राजनारायण जी ने ग्रामीण स्वास्थ्य योजना बनाई है जिसका उद्धाटन गांधी जी की जन्म गांठ के दिन दो अक्टूबर को होने जा रहा है। केन्द्रीय उद्योग मंत्री श्री फर्नांडीज गांवों में छोटे-छोटे उद्योगों का जाल बिछा देना चाहते हैं जिससे बेरोजगारों को रोजगार मिल सकेगा। उन्होंने बड़े उद्योगपतियों को चेतावनी भी दी है कि उनकी मनमानी नहीं चलने दी जाएगी और उन्होंने यदि नई उद्योग नीति के कार्यान्वियन में रुकावटें डालीं तो उन्हें आड़े हाथों लिया जाएगा। यह बात किसी से छिपी नहीं है कि केन्द्रीय गृहमंत्री चौधरी चरणसिंह जी के कार्यकलाप सदा ही ग्रामोन्मुख रहे हैं। प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने राष्ट्र के नाम अपने सन्देश में स्पष्ट रूप से कहा था कि गांवों की आर्थिक स्थिति सुधारने की ओर विशेष ध्यान दिया जाएगा और अब गरीब और अमीर, गांव और शहर की दोहरी समाज-व्यवस्था को सहन नहीं किया जा सकता।

केन्द्रीय कृषि और सिंचाई मंत्रालय और उसका ग्रामीण विकास विभाग भी अपनी जिम्मेदारी के प्रति काफी सजग है और उसकी ओर से समन्वित विकास कार्यक्रम को तेजी से आगे बढ़ाने की योजना को जोर-शोर से क्रियान्वित किए जाने का उपक्रम जारी है। इस तरह अब हमारी सरकार के कदम गांवों की ओर चल पड़े हैं और अब हम सब का यही नारा है कि चलो गांव की ओर। ★

कुरुक्षेत्र

वर्ष 22 आश्विन 1899 अंक 12

इस अंक में — पृष्ठ संख्या

ग्रामीण विकास कार्यक्रम के 25 वर्ष — 2
मदन गोपाल

कृषि के क्षेत्र में नया दृष्टिकोण और प्राथमिकता — 5
सुरजीत सिंह बरनाला

ग्रामवासियों के लिए स्वास्थ्य योजना — 8
राज नारायण

कृषि में नए मोड़ की आवश्यकता — 10
राजेन्द्र सिंह

पच्चीस वर्ष पहले यह जो हुआ — 12
के० पी० ए० मेनन

ग्रामीण विकास नियोजन-नीति में मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता — 14
प्रदीप कुमार मेहता

ग्रामीण क्षेत्र में सहकारिता वितरण प्रणाली-संरचना आधार और प्रबन्ध — 17
आर० एस० उमरे

गांधी जी के आर्थिक सिद्धान्त — 19
यशपाल जैन

खेती का आधार : पशुधन — 22
डा० रामगोपाल चतुर्वेदी

ग्रामीण विकास में युवकों का योगदान — 24
आई० जे० नायडू

खुशहाली के लिए सिंचाई क्षमता में वृद्धि आवश्यक — 27
ब्रजलाल उनियाल

विज्ञान और टेक्नालोजी गांवों की ओर — 30
बसन्त कुमार

कुरुक्षेत्र के पच्चीस वर्ष — 32
एस० एन० भट्टाचार्य

राष्ट्रीय एकता में ये बाधाएं क्यों — 35
डा० ब्रज नारायण सिंह

भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास — 37

मध्य प्रदेश में हाथकरघा उद्योग का विकास — 39

पहला सुख निरोगी काया: रोगनाशक फल केला — 42
डा० आर० एन० सिंह

पीपल नीचे चांदनी (रूपक) — 44
चन्द्र दत्त 'इन्दु'

कहानी: गहरी नदिया — 48
श्रीराम शर्मा 'राम'

तू मिसाल बन (कविता) — 50
कालीचरण सोनी, 'रहबर' सोनी

साहित्य-समीक्षा — 51

भारतीय कृषि प्रदर्शनी ऐग्री एक्स्पी '77' — 54

[illegible] पंचायत उद्योग प्रगति के पथ पर — आवरण [illegible]

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र, फोटो आदि भेजिए। भाषा सरल हो और रचना का आकार 'कुरुक्षेत्र' के दो ढाई पृष्ठ से अधिक न हो।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनाने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक 'कुरुक्षेत्र' (हिन्दी), कृषि मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

दूरभाष : 382406

एक प्रति 50 पैसे ● वार्षिक चन्दा 5.00 रुपये

सम्पादक : महेन्द्रपाल सिंह

उपसम्पादक : पारसनाथ तिवारी
शशि चावला

आवरण पृष्ठ : बी० डी० [illegible]

ग्रामीण विकास कार्यक्रम के 25 वर्ष ★ मदन गोपाल

[पच्चीस वर्ष पूर्व राष्ट्रपिता गांधी जी के जन्म दिन 2 अक्टूबर को स्वतंत्र भारत के ग्रामीण जीवन का कायाकल्प करने के एक महान काक्र्यम का श्रीगणेश हुआ था। यों तो हर वर्ष इसकी वर्षगांठ मनाई जाती है, परन्तु पच्चीसवीं वर्षगांठ का अपना महत्व होता है। यह एक ऐसा अवसर है जब हमें इस कार्यक्रम की प्रगति का मूल्यांकन करना चाहिए अर्थात् हमें देखना होगा हम कहां से चले, क्या हमारा लक्ष्य था तथा निर्धारित रास्ते पर हम जितना आगे चल पाए, कहीं भूले भटके तो नहीं और यदि हां तो क्यों?]

मेरा बाल्यकाल गांवों में बीता है। इसलिए इस विषय में मेरी विशेष रुचि रही है। इस सदी के आरम्भ में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने शान्ति निकेतन में एक ऐसी ही योजना का श्रीगणेश किया था। गांधी जी ने भी बड़े-बड़े नगरों को छोड़ कर सेवाग्राम स्थान पर ग्रामीण जीवन में सुधार लाने की योजना बनाई थी। इनके अलावा, केरल प्रदेश में मार्थण्डम स्थान पर वाई० एम० सी० ए० ने भी एक ऐसी ही योजना बनाई थी। उत्तर बम्बई (आजकल महाराष्ट्र) सरकार ने भी इस दिशा में कार्यक्रम अपनाया और बड़ौदा राज्य में वी० टी० कृष्णामाचारी ने भी ऐसा ही कार्यक्रम चलाया। मद्रास सरकार पीछे न रही और वहां भी इसी तरह कार्यक्रम शुरू किया गया। स्वतन्त्रता से पूर्व (संयुक्त) पंजाब राज्य में यूनियनिस्ट सरकार के प्रोत्साहन से ब्रिगेडियर एफ० एल० ब्रेन ने गुड़गांव में इसी प्रकार की एक योजना चलाई थी। आजादी के बाद भी इटावा में एलबर्ट मायरे ने ग्रामीण जीवन में उद्धार लाने का एक कार्यक्रम बनाया था।

इन सब योजनाओं का थोड़ा बहुत प्रभाव भी हुआ परन्तु ये क्षेत्रीय स्तर पर रहीं। 1952 के आरम्भ में एक नई योजना का आरम्भ हुआ जिसके अन्तर्गत पुरानी ग्रामोद्धार योजनाओं से लाभ उठाकर एक ऐसे कार्यक्रम की नींव पड़ी जिसे देश भर में चलाया गया। इस कार्यक्रम की एक विशेषता यह भी थी कि इसके अन्तर्गत कई मोर्चों पर एक साथ धावा बोला जाना था।

कृषि कार्यक्रम का हमारे जीवन में बड़ा महत्व रहा है। इस दिशा में प्रगति तब ही सम्भव है जब गांवों में नए उत्तम बीज, खाद, यन्त्र आदि उपलब्ध हों। जब हल चलाने और दूध देने वाले, मवेशी स्वस्थ हों, जब कृषक और उसके परिवार के सदस्यों का स्वास्थ्य ठीक हो, उनकी शिक्षा का ठीक से प्रबन्ध हो, गांवों का वातावरण ठीक तथा गांवों में सफाई हो, घरों में बीमारी न हो इत्यादि।

योजना को चालू करने से पहले इस बात का फैसला करना था कि कार्यान्वित करने के लिए ईकाई क्या हो। आजादी के पूर्व समस्त देश में सबसे छोटी प्रशासनिक इकाई थी जिला। इसका क्षेत्र काफी बड़ा था। हर जिले में दो तीन तालुका या तहसीलें थीं। परन्तु इनका सम्बन्ध केवल लगान की वसूली से था।

नई योजना को सामुदायिक विकास का नाम दिया गया। इसके अन्तर्गत सारे देश में तालुका या तहसील के स्तर पर काम आरम्भ किया गया। लगभग 55 ऐसी इकाइयां स्थापित की गई। अनुभव का लाभ उठाकर फिर यह निर्णय किया गया कि इकाई इससे भी छोटी होनी चाहिए। तब 'ब्लाक' की योजना बनी। सारे देश में 5300 ब्लाक स्थापित करने का फैसला हुआ। ऐसा फैसला हुआ कि हर ब्लाक की जनसंख्या साठ या सत्तर हजार से अधिक न हो। हर ब्लाक का विभाजन दस क्षेत्रों में किया गया। हर क्षेत्र में केवल दस ग्राम हों और जनसंख्या भी छ: या सात हजार हो। सामुदायिक विकास योजना के अन्तर्गत हर ब्लाक के स्तर पर विशेषज्ञों की टोलियां नियुक्त की गई। विशेषज्ञ पशु पालन स्वास्थ्य शिक्षा एवं सहकारिता से सम्बन्ध रखते थे। इन सबको मिला कर काम करना होता था और इन सबके काम के सर्वेक्षण के लिए था एक खण्ड विकास अधिकारी जिसका लोकप्रिय नाम है बी० डी० ओ० (ब्लाक डवलपमेन्ट आफीसर)। यह तो रहा ब्लाक के स्तर पर। हर दस ग्रामों के सर्कल में एक ग्राम सेवक भी नियुक्त किया गया। इसको एक साइकिल दी गई ताकि अपने क्षेत्र के गांवों में जा जाकर लोगों से सम्बन्ध स्थापित करे, उनकी कठिनाइयों को समझे, उनका समाधान करे या ब्लाक के विशेषज्ञ की सहायता से समाधान करवा सके। 'ब्लाक' के स्तर पर सारे अधिकारियों की सुविधा के लिए एक जीप दी गई। यह इस योजना का एक विशेष अंग था। अफसर लोग दूर-दूर के गांवों को जाने में हिचकिचाते थे। जीप एक ऐसा साधन बना जिससे ब्लाक स्तर के अधिकारी अपने क्षेत्र के दूर वाले गांवों में पहुंच सकते थे।

नई योजना को कार्यान्वित करने के लिए विशेष अधिकारियों के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया गया। देश भर में कई स्थानों पर बी० डी० ओ०, ग्राम सेवक और समाज शिक्षा अधिकारी जैसे कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए संस्थाए बनाई गई।

2 अक्टूबर, 1952 को जिस कार्यक्रम का श्रीगणेश हुआ उससे बड़ा उत्साह पैदा हुआ। हर राज्य से मांग हुई कि उसके क्षेत्र में अधिक ब्लाक स्थापित किए जाएं। योजना केन्द्रीय तो थी परन्तु इसका आधार था राज्यों द्वारा पूरा सहयोग। इतना ही नहीं ब्लाक को दी गई राशि का वितरण भी लोगों के सहयोग के आधार पर था।

सामुदायिक विकास योजना का ध्येय

था ग्रामीण जनता को प्रोत्साहित करना ताकि विकास के काम में वे पूरा हाथ बंटाए। इस विकास कार्यक्रम को सरकारी नहीं बल्कि अपना समझें। इसलिए आवश्यक था कि ग्राम पंचायतों को पूरा सहयोग मिले। यह ध्येय सराहनीय था पर आरम्भ में ऐसा लगा कि पंचों का सहयोग हर क्षेत्र में पूरी तरह नहीं मिला। कार्यकर्ता उत्सुक थे कि काम आगे बढ़े। यदि पंचायत के सदस्य सहयोग नहीं देते हैं तो उन्हें छोड़कर दूसरों के सहयोग के आधार पर प्रगति में कोई हर्ज नहीं। ऐसा ही हुआ और इसका एक दुष्परिणाम भी हुआ। जब यह नजर आया कि इस योजना के अन्तर्गत बढ़िया बीज मिल रहा है, रासायनिक खाद मिल रही है, नए यन्त्र मुहैया किए जा रहे हैं तो गांवों के धनी लोग तथा बड़े-बड़े जमींदार लोग आगे आए और उन्होंनेयोजना के अन्तर्गत दी गई सुविधाओं का लाभ उठाया। आगे चल कर इस बात की बड़ी आलोचना हुई। सामुदायिक विकास योजना के आलोचकों ने कहा कि उससे धनी लोग अधिक धनी बन गए हैं और निर्धन अधिक निर्धन।

सामुदायिक विकास योजना के संचालक एक बड़े मेधावी सज्जन थे जो चार पांच हजार महीने की प्राइवेट नौकरी छोड़कर गांवों की प्रगति के लिए बहुत कुछ न्यौछावर करके आए थे। किसान के बेटे थे। देश का विभाजन हुआ तो उनका परिवार सिल्हट में रह गया। यह भारत में थे। इनको बचपन की याद थी। ग्रामीण लोगों की सेवा का ध्यान आया। तो संकल्प को लेकर आगे आए। बहुत बेढब पुरुष हैं। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने प्रोत्साहन दिया। उधर योजना आयोग के उपप्रधान जिन्होंने बड़ौदा में ग्राम विकास को प्रोत्साहन दिया था, दोनों ने इस संचालक, कृषि पुत्र एस० के० डे० को कार्यक्रम आगे को बढ़ाने की सम्मति दी। कुशाग्र बुद्धि के स्वामी ने समय की पुकार सुनी और इस योजना के संचालक बने। कार्यक्रम की सराहना हुई और संचालक आगे बढ़े।

सामुदायिक प्रायोजनाओं के काम की प्रशंसा हुई। 1956 में सामुदायिक विकास प्रशासन का एक मंत्रालय बनाया गया। तब मेरा काम था इस कार्यक्रम का प्रचार, मुझे याद है इस विभाग के सचिव ने कहा था, 'एक मंत्रालय तो बन गया है परन्तु एक 'मिशन' हमारे हाथ से जा रहा है। या चला जाएगा।' और यही हुआ। कार्यक्रम सफल होता हुआ नजर आया। सब राज्य सरकारों की मांग थी कि उन्हें अधिक 'ब्लाक' दिए जाएं। इस कार्यक्रम के लिए कार्यकर्ताओं की आवश्यकता थी। मुख्य मंत्रियों की ओर से अनुरोध था कि उनके राजस्व विभाग के कर्मचारियों को सामुदायिक विकास विभाग में नियुक्ति दी जाए। पुराने कार्यकर्ताओं का मत था कि ये कर्मचारी पुराने ढर्रे पर चलने वाले हैं और इस कार्यक्रम में इन लोगों की नियुक्ति ठीक नहीं होगी। इन लोगों का सम्बन्ध ग्रामों के धनी लोगों से था। पहले ही यह आरोप था कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम से अधिक लाभ धनी लोगों को पहुंचा है। यह प्रवृत्ति और प्रबल हो जाएगी। इस धारणा में कुछ सत्यता भी थी। परन्तु मुख्यमंत्रियों के आग्रह ने जोर पकड़ा और बड़ी अधिक संख्या में नायब तहसीलदार और तहसीलदार सामुदायिक विकास योजना से सम्बन्धित हुए। इसका परिणाम अच्छा नहीं हुआ। इनको हुकूमत का नशा था। और इस विभाग में उन्हें जीप तथा दूसरी सुविधाओं की सहायता भी मिली। फिर क्या था एक नया वातावरण उत्पन्न हुआ और विकास कार्यक्रम को इससे बल नहीं मिला।

फिर भी सामुदायिक विकास योजना की प्रगति का दावा किया जाता रहा। जरूरत महसूस की गई कि गांव पंचायतें इस काम में योगदान करें। कार्यक्रम के संचालक का मत था कि तीन संस्थाएं ही इस काम को आगे ले जा सकती हैं। ये थीं ग्राम पंचायत, ग्राम सहकारी संस्था और ग्राम विद्यालय। जब सामुदायिक विकास प्रशासन एक मन्त्रालय बन गया तो जमीन तैयार थी। पंचायतों का काम सामुदायिक मन्त्रालय को सौंपा गया। थोड़े ही दिन पश्चात् ग्राम सहकारी संस्था को भी सामुदायिक विकास मंत्रालय को सौंपा गया। बाद में कार्यक्रम का नाम बदल कर ग्राम विकास रख दिया गया था।

कार्यक्रम के आरम्भिक चरण में पंचायतों का सहयोग पूरी तरह नहीं मिल पाया था। परन्तु आगे चल कर ग्राम पंचायत के सदस्य आगे आए। ऊपर मैंने कहा कि सामुदायिक विकास योजना का आधार था तीन संस्थाओं को मजबूत बनाना—ग्राम पंचायत, ग्राम सहकारी संस्था और ग्राम विद्यालय। जहां तक ग्राम पंचायतों का सम्बन्ध है, इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम को कार्यान्वित किया गया, यह था पंचायती राज। इसके अन्तर्गत हर गांव में एक ग्राम पंचायत स्थापित की गई। ग्राम पंचायतों ने एक-एक सदस्य भेज कर ब्लाक स्तर पर पंचायत समिति का निर्माण किया और 'ब्लाक' पंचायत समितियों के सदस्यों ने जिला स्तर पर जिला परिषद् बनाई। तीनों संस्थाओं—अर्थात् ग्राम पंचायत, पंचायत समिति तथा जिला परिषद्—को बहुत सारे अधिकार दिए गए। भिन्न-भिन्न स्तरों पर इन संस्थाओं के निर्णय कार्यान्वित होने लगे और इनको कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी भी बी० डी० ओ० को तथा जिलाधीश को सौंपी गई। कार्यक्रम सफल बनाने के लिए लगान की वसूली का काम भी इन्हें सौंपा गया। पंचायती राज की कल्पना महान थी। इसके अन्तर्गत देश की ग्रामीण जनता द्वारा बल मिलना था। विधान सभा तथा संसद् के चुनावों के लिए आवश्यक शिक्षा देने का माध्यम यही योजना थी।

इस दिशा में अपेक्षित प्रगति नहीं हुई। देखने में आया कि ग्राम पंचायतों के चुनावों में जात-पांत और भाई-भतीजावाद का बोलबाला रहा और अच्छे किस्म के व्यक्ति आगे नहीं आ सके। कहीं-कहीं तो 'दादागिरी' के उदाहरण देखने में आए। आशा तो पूरी न हुई परन्तु ग्रामीण जीवन में निस्सन्देह इससे एक जागृति आई।

ग्राम पंचायत के क्षेत्र में कुछ काम तो हुआ और लोगों में जागृति आई परन्तु सहकारिता के क्षेत्र में इतनी सफलता नहीं हुई। इसका मुख्य कारण था गांव के सेठ लोगों का विरोध। सहकारी बैंक एक सरकारी विभाग ठहरा। इसके लिए दफ्तर भी स्थापित करना पड़ा। एक सहकारी इन्सपैक्टर, एक क्लर्क, एक चपरासी, चौकीदार भी। इन सब पर खर्च होना अनिवार्य था। फिर सरकारी दफ्तर होने के नाते दिन में आठ घण्टे खुला रहता। इतवार के दिन छुट्टी। इसके अतिरिक्त, पूरी सरकारी छुट्टियां भी थी। सरकारी बैंक को पैसा देने से पूर्व जमानत लेना भी आवश्यक होता है। लोगों का अनुभव यह भी है कि समय पर किस्त का भुगतान न हो तो झंझट उठ खड़ा होता है। बेचारा किसान ऐसी हालत में परेशान हो जाता है। यह तो रही सहकारी बैंक की बात। इसके विपरीत ग्राम का बनिया है, जिसकी दुकान या घर ही उसका दफ्तर है, उसको न क्लर्क की जरूरत है, न चपरासी की। वह कभी छुट्टी नहीं करता। चौबीस घण्टे उसका घर खुला रहता है।

यदि किसान को रात के बारह बजे भी धन की आवश्यकता हो तो बनिया या गांव का सेठ उसे दे देता है। सेठ जी का हिसाब-किताब भी सीधा सादा है। मोटे-मोटे रजिस्टर नहीं है। केवल एक बही है। उसी पर हस्ताक्षर या अंगूठे का निशान ले लिया जाता है। जमानत की भी आवश्यकता नहीं है। दोनों का एक दूसरे पर पूर्ण विश्वास है। किसान उधार उतार देता है। यह उसका धर्म है। यदि इस जन्म में नहीं उतारेगा तो अगले में तो उतारना ही होगा। बोझ साथ नहीं ले जाना है। इसी धारणा को लेकर बनिया कर्ज देता है। उसका खर्चा भी बहुत कम है। फिर जीवन में ऐसे भी अवसर आते हैं जब बैंक उधार नहीं दे सकता। जैसे घर में मौत हो जाने पर। पैसे की आवश्यकता किसको नहीं होती। प्रथा बुरी तो है मगर है। जब इस काम के लिए बैंक कर्ज नहीं दे सकता तो किसान कहां जाए? सेठ के पास। और जब उसका संबंध सेठ जी से है तो वह बैंक क्यों जाएगा? ठीक है सूद अधिक पर पैसा मांगने पर एकदम मिल तो जाता है। इस स्थिति में बनिए वाली संस्था के मुकाबले में सहकारी बैंक कैसे सफल हो सकते हैं। उसकी सूद की दर तो कम है परन्तु उधार लेने का झंझट तो है। फिर बैंक के पास सरकारी पैसा है। दफ्तर और अधिकारियों के वेतन पर भी खर्च होता है। यह घाटा पूरा करता है। इसके बावजूद भी सहकारी बैंक को अपना ध्येय पूरा करने में इतनी सफलता नहीं मिली जिसकी आशा थी।

जिस धारणा से विकास कार्य आरंभ किया गया था यदि वह पूरा होता तो इस देश में दूध और शहद की नदियां बहतीं। यह तो नहीं हो पाया। क्यों? कारण यह है कि देहात में प्रगति तो बहुत हुई। अनाज का उत्पादन बढ़ा, दूध के उत्पादन में भी वृद्धि हुई और भी कई क्षेत्रों में उन्नति हुई। पर देश की जनसंख्या भी इतनी बढ़ी कि किए कराए पर पानी सा फिर गया।

लोगों को अधिक लाभ पहुंचने के रास्ते में यह एक बड़ी अड़चन थी। प्रगति निस्संदेह हुई। भारतीय किसान ने हवा को देखा, स्थिति को समझा और पूरा योगदान दिया। उस ने यह भी सिद्ध कर दिया कि वह रूढ़िवादी नहीं बल्कि एक जागरूक व्यक्ति हैं। बढ़िया बीज मिला तो उसे ग्रहण किया। खाद बनाने का तरीका देखा तो अपनाया। जब रासायनिक खाद के प्रयोग को सुना तो उसे भी अपनाया। नये यंत्रों को भी काम में लाया। एक ही खेत में दो-दो तीन-तीन फसलें उगाने की प्रणाली अपनायी। बड़ा उत्साह देखने में आया। मेरी धारणा है कि यही कार्यक्रम है जिस ने खाद्य पदार्थ की उपज में क्रान्ति ला दी।

आज हमें सामुदायिक विकास योजना के उन कार्यकर्ताओं को धन्यवाद देना चाहिए जिन्होंने पच्चीस वर्ष पहले ग्रामीण जीवन में कायाकल्प कर देने का संकल्प किया था। इतनी प्रगति तो नहीं हुई जितनी कि आशा थी परन्तु जितनी हुई उससे एक बात तो सिद्ध हो गई—ग्रामीण जीवन का स्तर ऊंचा उठाने के लिए केवल एक ही मंत्र है – वह है सामूहिक प्रयत्न, समय के साथ चलना और दृढ़ संकल्प।

क्या 30 जनवरी शहीद दिवस पर ग्राम विकास योजना व पंचायतों के सभी सदस्य राष्ट्रपिता के शहीद होने की स्मृति में शपथ नहीं ले सकते कि वे निष्ठा और ईमानदारी से राष्ट्र-निर्माण में योगदान करेंगे और जहां कहीं कोई भ्रष्टाचार देखेंगे उसके उन्मूलन में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ेंगे। ★

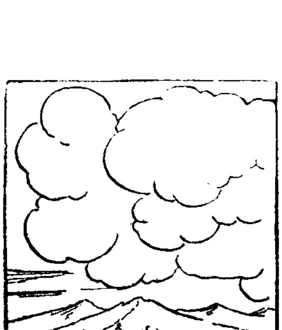

कृषि के क्षेत्र में नया दृष्टिकोण और प्राथमिकता

[कृषि और ग्रामीण विकास के कार्य में तेजी लाने के लिए अनेक नीतियों और कार्यक्रमों को नया रूप दिया जा रहा है। उत्पादन का आधार व्यापक बनाने और प्रति एकड़ उपज बढ़ाने के लिए प्रयत्न किए जा रहे हैं। सतही और भूमिगत दोनों प्रकार के सिंचाई साधनों का विकास करने का प्रयत्न किया जा रहा है। इसके साथ ही उपज बढ़ाने के लिए आवश्यक कृषि सहायकों की व्यवस्था और अनुसंधान कार्य, विस्तार सेवा एवं कृषकों के प्रशिक्षण में बढ़ोतरी की जा रही है। कृषि विकास के ढांचे को भी मजबूत बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है।]

कृषि विकास की समस्या को सम्पूर्ण और समृद्ध ग्रामीण जीवन के व्यापक संदर्भ में देखा जाना चाहिए। विकास के लाभ ग्रामीणों तक स्वतः नहीं पहुंचते। ग्रामीण जीवन की दशा सुधारने के लिए सुविचारित प्रयत्न करने आवश्यक हैं। इसके अलावा, काम कर सकने वाले समस्त लोगों को ठीक किस्म का काम देने का लक्ष्य भी महत्वपूर्ण है।

इन लक्ष्यों को केवल कृषि उत्पादन बढ़ाकर प्राप्त किया जा सकता है। कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय बढ़ोतरी के लिए यह आवश्यक है कि किसानों को उनके प्रयत्नों के लिए समुचित पुरस्कार दिया जाए। उन्हें अतिरिक्त साधनों की आवश्यकता है। इसके साथ ही उनके दृष्टिकोण में बदलाव लाने की भी आवश्यकता है ताकि वे परती जमीन को खेती योग्य बनाने, उर्वरकों, अच्छे बीजों, कीड़ा मार दवाओं आदि की खरीद में अपने साधन लगाएं।

इससे सहायक एवं कृषि उद्योगों, कुटीर उद्योगों, हथकरघा और दस्तकारी आदि के समग्र विकास को बढ़ावा मिलेगा। गांवों में बेरोजगार या अल्प रोजगार प्राप्त लोगों का शहरों को पलायन और शहरों में गन्दी बस्तियों का निर्माण बन्द होगा।

1975-76 में कुल खाद्यान्न उत्पादन 12 करोड़ 8 लाख 30 हजार टन हुआ, जबकि 1974-75 में 9 करोड़ 98 लाख 30 हजार टन हुआ था। अनुमान है कि इस वर्ष 11 करोड़ 10 लाख टन खाद्यान्नों का उत्पादन होगा। पांचवीं योजना के अन्त में 12 करोड़ 50 लाख टन अनाज उत्पादन का लक्ष्य है। इस क्षेत्र में प्रगति सन्तोषजनक है और इस समय हमारे भण्डारों में काफी अनाज है। तथापि हम न तो सन्तुष्ट होकर बैठ सकते हैं और न अपने प्रयत्नों को शिथिल कर सकते हैं।

अनुभव से सीख

कृषि विकास का हमारा 30 वर्ष का अनुभव हमें बताता है :

(क) भारतीय किसान हमेशा खेती मेंनए लाभदायक तरीके अपनाने को तैयार रहते हैं बशर्ते कि उन्हें नए तरीके अपनाने के लिए सभी किस्म की सहायता प्रदान की जाए।

सुरजीत सिंह बरनाला,

केन्द्रीय

कृषि और सिंचाई मंत्री

(ख) देश के विभिन्न क्षेत्रों, फसलों और खेती के तरीकों में समान प्रगति नहीं हुई है। इसके साथ ही फसल, पशुधन और मछली पालन के क्षेत्रों में आवश्यक एकीकरण नहीं हुआ है।

(ग) असिंचित क्षेत्रों की उपेक्षा की गई है क्योंकि पुरानी कार्यनीति में सिंचित क्षेत्रों पर विशेष जोर दिया गया था।

(घ) सभी विस्तार कार्यक्रमों में ग्रामीण महिलाओं की उपेक्षा की गई है। कृषि उत्पादन और कृषि कार्यों में उनकी भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है।

(ङ) यद्यपि हमने कृषि उपज बढ़ाने की कुछ क्षमता विकसित कर ली है तथापि, हम अभी तक समस्त जनता भोजन खरीद सके यह क्षमता विकसित नहीं कर सके हैं। उत्पादन में केवल 5 प्रतिशत की घटा-बढ़ी से हमारी अर्थव्यवस्था गड़बड़ा जाती है।

क्योंकि कृषि उत्पादन पानी की उपलब्धता और सुथरे बीजों, खाद, उर्वरकों आदि की सप्लाई पर निर्भर करता है, इसलिए इस दिशा में जोरदार कदम उठाए गए हैं। जहां तक सिंचाई का सम्बन्ध है, पंजाब के अनुभव से पता लगता है कि बड़ी व मंझोली सिंचाई परियोजनाओं के अलावा छोटी सिंचाई परियोजनाएं भी महत्वपूर्ण हैं। भारत के पूर्वी राज्यों और राजस्थान में भूमिगत जल के विशाल भण्डार हैं। भूमिगत जल के उपयोग का एक बड़ा कार्यक्रम शुरू किया जाना चाहिए। कुछ क्षेत्रों में पानी की कमी को देखते हुए पानी की वैज्ञानिक प्रबन्ध व्यवस्था पर जोर दिया जा रहा है। यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं कि सिंचाई कार्यक्रमों से अधिकाधिक बहु फसली और अधिक उपज देने वाले बीजों के उपयोग के कार्यक्रमों को बढ़ावा मिले।

बारानी खेती

उन क्षेत्रों में, जहां वर्षा नहीं होती या कम होती है या कभी-कभी होती है, कृषि उत्पादन को स्थिर रखने के लिए खेती के बेहतर तरीके अपनाने के बारे में अनुसंधान किए जा रहे हैं। विस्तार संगठन को मजबूत, सक्रिय और अधिक कारगर बनाया जा रहा है ताकि नई जानकारी गांवों में पहुंच सके, इस काम में विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों का भी सहयोग लिया जा रहा है।

मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा और मक्का का उत्पादन बढ़ाने के लिए जो बारानी और अर्ध सूखा क्षेत्रों में पैदा होते हैं इन इलाकों में अधिक उपज देने वाली किस्मों का चलन बढ़ाया जा रहा है। 1977-78 में 70 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में अधिक उपज देने वाली किस्में बोने का प्रस्ताव है जबकि 1976-77 में केवल 55 लाख हैक्टेयर भूमि में अधिक उपज देने वाली किस्में बोई गई थीं। चूंकि वर्षा न होने या कम वर्षा होने से मोटे अनाज की फसल मारी जाती है अतः बारानी क्षेत्रों में केन्द्रीय परियोजना के रूप में खेती के सुधरे तरीकों की आजमाइशी योजना शुरू की जा रही है। ये परियोजनाएं अनुसंधान केन्द्रों के समीप शुरू की जा रही हैं।

कार्यक्रमों को नया रूप

कृषि कार्यक्रमों को वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार नया रूप देना होता है। हमें दालों, तिलहनों और कपास का उत्पादन तेजी से बढ़ाना है। दालों की प्रति व्यक्ति उपलब्धि बहुत कम हो गई है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् और कृषि विभाग ने दालों का उत्पादन बढ़ाने का एक कार्यक्रम शुरू किया है। आगामी रबी में चना, मसूर और मटर का उत्पादन बढ़ाने का प्रयत्न किया जाएगा। इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए पौध रक्षा, फास्फेट उर्वरकों का प्रयोग और इन फसलों के रकबे में विस्तार किया जा रहा है। देश के दाल पैदा करने वाले 46 प्रमुख जिलों में दालों की सघन खेती का कार्यक्रम शुरू किया गया है।

तिलहनों का उत्पादन

वनस्पति तेलों और तिलहनों की मांग उत्पादन की अपेक्षा अधिक है। तिलहनों का उत्पादन बढ़ाने के लिए कुछ कदम उठाए गए हैं। ये हैं (1) मूंगफली सरसों और तोरी की फसलों की रक्षा के लिए बड़े पैमाने पर पौध रक्षा कार्यक्रम। सरकारी सहायता से विमानों से दवा छिड़कने की एक योजना भी शुरू की गई है। (2) फास्फेट उर्वरकों का उपयोग बढ़ाने के लिए विशेष अभियान (3) आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और उड़ीसा में गर्मियों में तिलहनों की उपज बढ़ाने के लिए विशेष अभियान (4) बीजों की उपज बढ़ाने के कार्यक्रम को मजबूत बनाना। इसके अलावा, केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रयोजित तिलहन विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत तिलहनों का उत्पादन बढ़ाने का कार्यक्रम जारी रखा गया है। नए किस्म के तिलहनों जैसे सूरजमुखी और सोयाबीन के उत्पादन को बढ़ावा दिया जा रहा है। आशा है कि इन कार्यक्रमों से देश में तिलहनों का उत्पादन न केवल स्थिर होगा बल्कि बढ़ेगा।

कपास उत्पादन

कपास का उत्पादन बढ़ाने के लिए अनेक नए कार्यक्रम शुरू किए गए हैं। इनमें हैं (1) कीड़ों आदि की रोकथाम के लिए सरकारी सहायता से विमानों से कीट नाशी दवाओं का छिड़काव (2) देश के 7 महत्वपूर्ण कपास पैदा करने वाले जिलों में 1·4 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में सघन कपास विकास का कार्यक्रम शुरू करना (3) अधिक उत्पादन के लिए किसानों को उपयुक्त तरीके से धूमित बढ़िया बीज मुहैया करना और (4) पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, मध्यप्रदेश और आन्ध्रप्रदेश में प्रमाणित किस्म के बीजों का उत्पादन बढ़ाना। प्रमुख सिंचाई परियोजनाओं के सिंचित क्षेत्रों में कपास की खेती बढ़ाने के भी उपाय किए जा रहे हैं।

चीनी उत्पादन

गन्ने का उत्पादन बढ़ाने के लिए 1975-76 से गन्ना विकास की एक केन्द्र प्रायोजित योजना लागू की जा रही है। इस योजना के अधीन चुनी हुई चीनी मिलों के समीप 2,000 हैक्टेयर के ब्लाकों में गन्ने का सघन विकास कार्यक्रम कार्यान्वित किया जा रहा है। इस योजना के अधीन बढ़िया बीज का उत्पादन और वितरण किया जा रहा है, गन्ने की खेती की सुधरी विधियां प्रदर्शित की जा रही हैं, पौध रक्षा के कदम उठाए जा रहे हैं, गन्ना विकास विभाग के कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है और चीनी मिलों के समीप सम्पर्क सड़कें बनाई जा रही हैं। विकास कार्यों के साथ-साथ चीनी के दो तरह के मूल्य रख कर किसानों को गन्ने के अच्छे दाम दिलाए जा रहे हैं।

पटसन

चुने हुए जिलों में पटसन और मेस्टा का उत्पादन बढ़ाने के लिए पश्चिम बंगाल, बिहार, असम, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश और आन्ध्र प्रदेश के महत्वपूर्ण जूट और मेस्टा पैदा करने वाले जिलों में पटसन एवं मेस्टा का उत्पादन बढ़ाने का सघन कार्यक्रम हाथ में लिया गया है। उत्पादन बढ़ाने के लिए कीड़ा मार दवाओं और यूरिया के उपयोग की एक योजना मजूंर की गई है।

देश में गरी का उत्पादन बढ़ाने के भी प्रयत्न किए जा रहे हैं। गरी खाने के तेल का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। गरी का उत्पादन बढ़ाने के लिए संकर किस्म की पौध की सप्लाई और कीड़ों एवं रोगों से पौधों की रक्षा की भी व्यवस्था की गई है। केरल में, जहां देश का 60% नारियल पैदा होता है, नारियल का उत्पादन बढ़ाने के लिए रोग ग्रस्त पेड़ों को रोग मुक्त करने की एक केन्द्रीय योजना शुरू की गई है। इसके अलावा, 1977 के दौरान केरल में नारियल के पेड़ों की रक्षा एवं विस्तार की विश्व बैंक की एक योजना भी मजूंर की गई है। इस योजना के अधीन नारियल की खेती

को बढ़ावा देने वाले अन्य उपायों के साथ साथ केरल में अधिक उपज देने वाले नारियल लगाए जाएंगे।

कीट नियन्त्रण

सरकार ने कीट नियंत्रण के लिए एक दृष्टिकोण स्वीकार किया है, इसके अधीन कीट नियंत्रण की सभी विधियां आती हैं। कीट नियंत्रण में सबसे महत्वपूर्ण समय रहते कीड़ों का पता लगाना है। इसके लिए देश में पहले से ही 12 कीट निगरानी और पूर्वानुमान केन्द्र काम कर रहे है। 7 नए केन्द्रों की स्थापना की जा रही है। राज्य सरकारों ने भी अनेक ऐसे केन्द्रों की स्थापना की है। केन्द्र सरकार ने पांच जैवकीय नियंत्रण केन्द्रों की भी स्थापना की है।

कीट नाशी दवाओं की मांग मुख्य रूप से देशी उत्पादन से पूरी की जाती है। देश में कीड़ा मार दवाओं के निर्माण का सुदृढ़ आधार तैयार किया जा चुका है और इस समय लगभग 47 हजार टन दवाओं का उत्पादन होता है जो हमारी 90 प्रतिशत वार्षिक खपत के लिए काफी हैं।

मूल्य और उत्पादन

किसानों को बीज, खाद, कीड़ा मार दवाओं तथा अन्य सहायकों की सप्लाई करने और उत्पादन बढ़ाने में उनको सहायता देने के अलावा, सरकार इस बात को भी बहुत महत्व देती है कि किसान को उसकी उपज का मुनासिब दाम मिले। इस को ध्यान में रखकर प्रतिवर्ष कृषि उपज के दामों की समीक्षा की जाती है और उत्पादन की लागत एवं उत्पादन बढ़ाने के लिए प्रोत्साहन को ध्यान में रखकर कृषि उपज के दाम निश्चित किए जाते हैं। सरकार मूल्यों को गिराने से रोकने के लिए न्यूनतम खरीद मूल्य भी निश्चित करती है। पिछले दिनों सरकार ने वर्षा से प्रभावित गेहूं की किस्म में कुछ छूट दी। इससे किसानों को बड़ी राहत मिली।

विकास के लाभ सभी को समान रूप से मिलने चाहिए लेकिन अब तक का अनुभव बताता है कि धनी किसान या बड़े जमींदार इस काम को स्वयं हथिया लेते हैं। अब यह सुनिश्चित करने के लिए कि ये लाभ छोटे व सीमान्त किसानों को भी मिलें विशेष कदम उठाए गए हैं।

सीमान्त और छोटे किसानों को लाभ पहुंचाने की हमारी कार्य नीति में पशु पालन और डेरी उद्योग के विकास को मिश्रित खेती का आवश्यक अंग माना गया है। भूमिहीन मजदूर या सीमान्त किसान को, जो कोई खतरा उठाने की स्थिति में है, महामारी या अन्य विपदाओं से होने वाली हानि से बचाया जाना चाहिए।

बेरोजगारी निवारण

हमारी सरकार ने दस वर्ष में बेरोजगारी को समाप्त करने का संकल्प किया है। इसके लिए हमें प्रत्येक क्षेत्र के लिए श्रम प्रधान प्रौद्योगिक विकसित करनी होंगी। इस दिशा में जोरदार प्रयत्न किए जा रहे हैं।

हमारा उद्देश्य अन्ततः हर 25-30 गांवों के समूह के लिए कृषि, पशु विज्ञान, इंजीनियर और गृह विज्ञान स्नातकों का एक दल तैयार करना है। यह दल एक दूसरे के ज्ञान व जानकारी का लाभ पाकर गांवों के विकास के लिए कार्य करेगा।

हम अपनी पुरानी कृषि व्यवस्था और तौर तरीकों को जारी नहीं रख सकते क्योंकि इन तरीकों से उत्पादन में उल्लेखनीय बढ़ोतरी प्राप्त नहीं की जा सकती। आज हमें निम्नलिखित उद्देश्यों के लिए अपने दृष्टिकोण को नया रूप देने की जरूरत है ;

(क) अधिक उत्पादन के साधनों से कृषि उपज, फलों, मांस-मछली और घी दूध का अधिक उत्पादन ;

(ख) कृषि विकास को अधिक आय और रोजगार पैदा करने का साधन बनाना,

(ग) प्रत्येक जिले में कृषि-उद्योग समूहों की स्थापना। इस प्रकार के उद्योगों में कृषि मजदूरों को सबसे पहले काम दिया जाना चाहिए ;

(घ) किसान और क्षेत्र के विकास पर ध्यान देने वाली योजनाओं का श्रीगणेश !

आज हम नए युग की देहरी पर हैं। हम अपने कृषि कार्यक्रम को इस दिशा में मोड़ रहे हैं। विभिन्न खाद्यान्नों और व्यापारिक फसलों के अधिक उपज देने वाले बीज तैयार किए जा रहे हैं। ऋण देने वाली संस्थाओं को मजबूत बनाया जा रहा है। उर्वरक उत्पादन बढ़ाया जा रहा है और नए किस्म के उर्वरकों का उत्पादन शुरू किया जा रहा है।

उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने के लिए सरकार की नीतियों को नया रूप प्रदान किया जा रहा है ; व्यक्ति और समाज की खपत को इस प्रकार नियंत्रित किया जा रहा है कि गरीब से गरीब आदमी की आवश्यकताएं पूरी की जा सकें। ★

ग्रामवासियों के लिए स्वास्थ्य योजना

राज नारायण

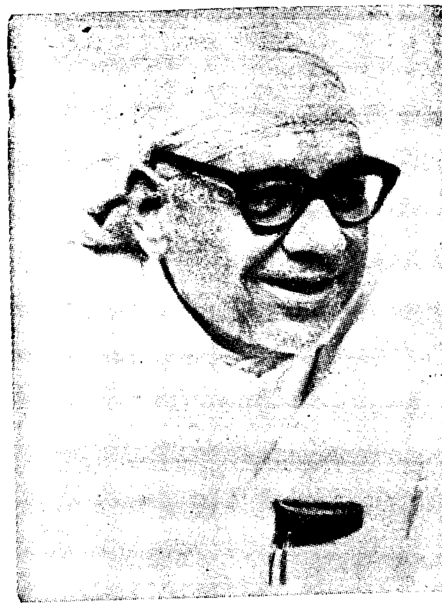

यह कहावत ठीक ही है कि सेहत नहीं तो कुछ नहीं। यदि व्यक्ति रोगी अथवा अस्वथ हो तो धन, संपदा तथा अन्य सुविधाओं का पूरा सुख नहीं उठा सकता। सुखी जीवन जीने के लिए अच्छा स्वास्थ्य होना अत्यंत आवश्यक है। इसी महत्वपूर्ण तथ्य को ध्यान में रखते हुए हम इस बात के लिए कृत-संकल्प हैं कि इस विशाल देश के सभी नागरिकों के लिए यथा-सम्भव अधिक से अधिक स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध की जाएं।

असली भारत गांवों में बसता है और ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के बिना देश सही अर्थ में उन्नति नहीं कर सकता। खेती-बाड़ी हो या घरेलू उद्योग हो या अन्य कोई भी कार्य, इनका विकास तभी हो सकता है जब ग्रामवासी रोगों से मुक्त हों और स्वस्थ हों। घर में यदि एक भी व्यक्ति रोग से पीड़ित हो तो पूरे परिवार का जीवन अस्त व्यस्त हो जाता है। इसलिए हमारी दृष्टि में यह अत्यन्त आवश्यक है कि भारतीय गांवों के प्रत्येक व्यक्ति को स्वस्थ जीवन बिताने की सुविधा प्राप्त हो। रोगों से उसकी रक्षा हो और कोई भी तकलीफ होने पर संतोषजनक इलाज की व्यवस्था हो।

गांधी जयंती से शुभारम्भ

हमारे देश में पिछले 30 वर्षों में स्वास्थ्य सेवाओं का बहुत विकास हुआ है, किन्तु यह स्पष्ट है कि यह विकास-कार्य अधिकतर शहरों तक ही सीमित रहा। गांवों के लोगों को अभी अपेक्षाकृत बहुत कम सुविधाएं प्राप्त हो पाई हैं। छोटी-छोटी बीमारियों के लिए भी उन्हें दूरवर्ती चिकित्सा केन्द्रों या अस्पतालों में जाना पड़ता है। इससे न केवल समय बर्बाद होता है, बल्कि आने-जाने आदि में भारी असुविधा भी होती है। देश के सभी ग्रामवासियों के लिए संतोषप्रद स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करना एक विशाल कार्य है और इसके लिए बहुत बड़े स्तर पर व्यवस्था करने की आवश्यकता है। हम ये सुविधाएं प्रदान करने के लिए बचन-बद्ध हैं और इस दिशा में हमारे प्रयास जारी हैं। ग्रामीण स्वास्थ्य योजना के द्वारा हम इस विशाल समस्या के समाधान की दिशा में कार्य प्रारम्भ कर रहे हैं। जन-कल्याण की भावना से प्रेरित इस योजना का श्रीगणेश इसी वर्ष गांधी जयन्ती के शुभ दिन से किया जा रहा है। गांधी जी जीवन पर्यन्त पिछड़े, गरीब और उपेक्षित लोगों की स्थिति को सुधारने के लिए प्रयत्नशील रहे। अतः यह उचित ही है कि उनकी जयन्ती के शुभ दिन से देश के करोड़ों ऐसे ग्रामवासियों के लिए स्वास्थ्य-रक्षा की प्रारम्भिक सुविधाएं प्रदास करनेकी व्यवस्था की जाए, जो अब तक काफी हद तक उनसे वंचित हैं।

जन-स्वास्थ्य रक्षक

ग्रामीण स्वास्थ्य योजना का मुख्य उद्देश्य यह है कि ग्रामवासियों को अपना स्वास्थ्य अपने हाथ में, के सिद्धांत के अनुसार अपने ही गांव में स्वस्थ जीवन के संबंध में जरुरी जानकारी और मार्ग-दर्शन प्राप्त हो तथा छोटे-मोटे रोगों और अन्य कष्टों के इलाज के लिए भी गांव में ही दवाइयां मिल जाएं। हमने यह अनुभव किया कि यह व्यवस्था तभी सफल और कारगर हो सकती है जब गांव के लोगों का पूरा सहयोग मिले और उन्हीं का कोई व्यक्ति इस कार्य को सक्रिय रुप में चलाने में योग दे। बाहर का व्यक्ति उन पर थोपने की अपेक्षा उनके द्वारा चुना गया व्यक्ति ही अगर यह कार्य करे तो निश्चय ही वह अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकेगा। इस बात को ध्यान में रखकर यह निर्णय किया गया है कि ग्रामीण स्वास्थ्य योजना के अंतर्गत एक हजार की आबादी वाले प्रत्येक गांव में एक जन-स्वास्थ्य रक्षक मनोनीत किया जाए। यह कार्यकर्ता गांव का ही निवासी होगा और वहीं के लोगों द्वारा चुना जाएगा। वह सरकारी कारिन्दा नहीं होगा, किन्तु उसे पुरस्कार के रूप में 50 रु० प्रति मास दिया जाएगा। वह अपने काम-काज के साथ-साथ लोगों के स्वास्थ्य की भी देखभाल करेगा। गांव के लोग इस बात को ध्यान में रख कर उसका चुनाव करेंगे कि उसमें सेवा की भावना हो और लोगों के मन मे उसके प्रति आदर हो। वह लोगों को समझाकर और सही जानकारी देकर अपने गांव में निश्चित स्वास्थ्य की भावना को बढ़ावा देगा। इसके अतिरिक्त, छोटी-मोटी बीमारियों के इलाज के लिए वह लोगों को गुणकारी दवाइयां मुफ्त देगा।

प्रशिक्षण

चुने गए जन-स्वास्थ्य रक्षक को 10 से 12 सप्ताह तक का प्रशिक्षण दिया जाएगा। इस प्रशिक्षण के अंतर्गत उसे न केवल स्वास्थ्य संबधी आवश्यक बातें बताई और समझाई जाएंगी, बल्कि छोटी-मोटी ऐसी बीमारियों के इलाज के बारे में भी बताया जाएगा जो आमतौर पर गांवों में होती रहती हैं और जिसके इलाज के लिए तत्काल सहायता की जरुरत होती है। प्रशिक्षण के बाद उसे दवाइयों और

साज-सामान की एक थैली (किट) दी जाएगी और साथ ही एक मार्गदर्शी पुस्तिका भी सौंपी जाएगी। थैली में साधारण किस्म की दवाइयां और अन्य जरूरी साज-सामान होगा। इसमें किसी विशेष चिकित्सा पद्यति की ही दवाइयां नहीं होंगी, वरन् ऐलोपैथिक, आयुर्वेदिक होम्योपैथी, यूनानी और सिद्ध की चुनी हुई दवाइयां होंगी, जो विभिन्न बीमारियों के इलाज के लिए दी जा सकेंगी। ये दवाइयां जन-स्वास्थ्य रक्षक के पास हमेशा रहेंगी और समाप्त होने पर सरकार की ओर से समय-समय पर और भी पहुंचती रहेंगी।

अभी इस योजना को देशव्यापी स्तर पर नहीं बल्कि अपेक्षाकृत कुछ छोटे स्तर पर आरम्भ किया जा रहा है। 2 अक्टूबर, 1977 को यह योजना देश के सभी जिलों के 777 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के क्षेत्रों में शुरु की जाएगी। जिन 28 जिलों में बहुउद्देशीय स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण पूरा हो चुका है वहां पूरे जिले में यह योजना लागू होगी तथा अन्य जिलों के एक-एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के क्षेत्रों में आरंभ की जाएगी। हमारा यह निरंतर प्रयास रहेगा कि उत्तरोत्तर इस योजना का विस्तार हो और अन्ततोगत्वा सभी ग्रामवासियों को इसका लाभ मिल सके।

इस योजना को कार्यान्वित करने में जिन तीन बातों पर हम विशेष ध्यान दे रहे हैं वे हैं :

(क) जन-स्वास्थ्य रक्षक का चुनाव अत्यन्त सावधानी से किया जाए। इन में स्त्री और पुरुष दोनों का चुनाव होगा।
(ख) जन,स्वास्थ्य रक्षक को, जो प्रशिक्षण दिया जाए, वह गहन भी हो और सार्थक भी हो।

(ग) इस बात का पूरा ध्यान रखा जाए कि जन-स्वास्थ्य रक्षकों के पास दवाइयां नियमित रुप से पहुंचती रहें और समय पर दवाइयां उपलब्ध न होने के कारण उन्हें असुविधा न हो।

व्यापक व्यवस्था

पहले चरण में ग्रामीण स्वास्थ्य योजना में जो सफलता मिलेगी उसीके आधार पर इसे और अधिक क्षेत्रों में लागू करने का प्रयास किया जाएगा। इस योजना का मूल सिद्धांत यह है कि लोग अपनी सेहत ठीक रखने के लिए न केवल उत्सुक हों, बल्कि सचेष्ट भी हों। अगर हिसाब लगाया जाए तो हर गांव के लिए एक जन-स्वास्थ्य रक्षक के हिसाब से इस योजना के अंतर्गत 5 लाख 80 हजार कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होगी। वैसे कुल मिलाकर स्वास्थ्य सेवाओं को जधिक व्यापक और लाभकर बनाने की दृष्टि से जो व्यवस्था की जा रही है उसके अनुसार यह अनुमान है कि आगे चल कर प्रत्येक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में न केवल योग्यता प्राप्त डाक्टर होंगे वरन् दश स्वास्थ्य सहायक और 40 बहुउद्देशीय कार्यकर्ता भी होंगे। उनसे जन-स्वास्थ्य रक्षकों को भी आवश्यक मार्ग-दर्शन और तकनीकी सहायता मिलती रहेगी। इससे जन-स्वास्थ्य रक्षक की उपयोगिता अपने गांव में निरंतर बढ़ती रहेगी और कठिन मामलों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के डाक्टर तथा अन्य कर्मचारियों का सहयोग भी उसे मिलता रहेगा।

जन-स्वास्थ्य रक्षक अपने गांवों में नव-जात शिशुओं और बच्चों को रोगों से बचाने के टीके लगाएंगे और उन्हें अन्धेपन से बचाने के लिए विटामिन 'ए' की गोलियाँ भी देंगे। इसी प्रकार, वह मलेरिया आदि रोगों के इलाज के लिए भी दवा देंगे। प्रशिक्षण के परिणामस्वरुप उन्हें स्वास्थ्य विज्ञान की मूलभूत बातों, सहित ठीक रखने के उपायों, छूत की आम बीमारियों के इलाज, जच्चा-बच्चा की देखभाल, प्राथमिक उपचार आदि की जानकारी होगी और वे उसका लाभ अपने गांव वालों को पहुंचा सकेंगे।

ग्रामीण स्वास्थ्य योजना किस प्रकार चल रही है और कितनी प्रभावी सिद्ध हो रही है, इसका अध्ययन भी निरंतर चलता रहेगा और इसको चलाने में जो व्यावहारिक कठिनाइयां आएंगी उन्हें दूर करने का भी प्रयास किया जाता रहेगा। आशा की जाती है कि ग्रामीण स्वास्थ्य योजना ग्रामवासियों में स्वस्थ जीवन जीने की भावना को तीव्र बनाएगी और जीवन को सुखमय बनाने में मदद देगी। ★

कृषि में नए मोड़ की आवश्यकता

राजेन्द्र सिंह, कृषि मंत्री उ०प्र०

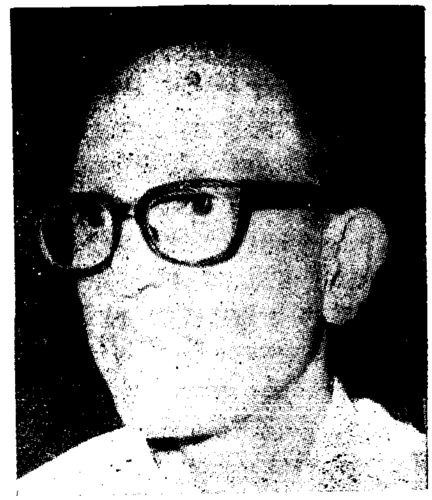

राजेन्द्र सिंह जी

कृषि के महत्व, विकास तथा इसके विभिन्न पहलुओं पर कृषि विशेषज्ञ तथा कृषि में रूचि रखने वाले व्यक्ति अपने विचार प्रकट करते रहते हैं। विचारों में कुछ हद तक भिन्नता होते हुए भी सभी इस बात से सहमत हैं कि कृषि को प्राथमिकता दी जाए। राष्ट्र की समृद्धि के लिए कृषि पर विशेष बल देने की आवश्यकता है। कृषि क्षेत्र में पंडित होने या इस दिशा में मौलिक विचारधारा रखने का साहस तो मैं नहीं करूंगा लेकिन यह अवश्य कहना चाहूंगा कि कृषि मेरा पैतृक व्यवसाय रहा है और कृषि एवं कृषक की समस्याओं का मैंने निकट से अध्ययन किया है। एक किसान के सामने आने वाली अनेक कठिनाइयों से मुझे स्वयं झूझना पड़ा है। अपने अनुभवों के बल पर मेरी मान्यता है कि कृषि में नए मोड़ की आवश्यकता है।

स्वाधीनता प्राप्ति को आज तीस वर्ष बीत गए। अन्य कार्यों की तरह कृषि विकास के क्षेत्र में भी प्रदेश और देश में बहुत काम हुआ। "हरित क्रांति" की भी बहुत चर्चा हुई। लेकिन 30 वर्षों के लम्बे समय में आम किसान के जीवन में उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ। साधनहीन कृषक निर्धन होते देखा गया। मजदूरी करके पेट पालने वाला कृषि से उदासीन रहा। कृषि पर निर्भर समाज का विशाल समुदाय केवल गुजारे लायक खेती करने तक ही सीमित रहा। कृषि कार्य व्यवसाय के रूप में नहीं उभर सका। कृषि विशेषज्ञों ने यह स्वीकार किया है कि "हरित क्रान्ति" केवल साधन सम्पन्न कृषकों तक ही सीमित रही। लाखों-करोड़ों कृषकों को "हरित क्रांति" से विशेष लाभ नहीं हुआ। तब कैसी "हरित क्रान्ति और कैसा कृषि विकास। उत्तर प्रदेश में यदि 84% लघु और सीमान्त कृषक कृषि विकास से वंचित रह जाएं और हम यह दावा करें कि कृषि क्षेत्र में हमने दुर्ग जीत लिया तो मेरे विनम्र विचार में यह कोरा दम्भ होगा। इसी परिप्रेक्ष्य में हमें कृषि के पूरे स्वरूप को देखना है और यही नए मोड़ का प्रेरक है।

कृषि में नए मोड़ जन-जन की आशाओं और आकांक्षाओं के अनुरूप हो ताकि इस पथ पर लाखों-करोड़ों कृषकों को अग्रसर होने के लिए प्रेरित किया जा सके। यही कृषि विकास का मूल लक्ष्य होना चाहिए। जब हम कृषि विकास की दर की बात करते हैं या कुछ बड़े कृषकों द्वारा प्रति हैक्टर अधिक उत्पादन प्राप्त करने का आदर्श अपने सामने रखते हैं तो यह भूल जाते हैं कि प्रदेश में साधन सम्पन्न कृषकों की संख्या नगण्य है। साधन सम्पन्न कृषकों को साधनों से और सम्पन्न किया जाए लेकिन साधनहीन का कोई हाल पूछने वाला नहीं तो "हरित क्रांति" 'समग्र क्रान्ति' नहीं बन सकती। इससे कृषकों के वर्ग में ऐसी विषमता आ गई है कि लोग राष्ट्र स्तर पर नए मोड़ की अपेक्षा करने लगे और एक प्रकार से आज की 'मौन क्रान्ति" इसी का प्रतिफल है। इस प्रकार हमारा दायित्व और भी बढ़ जाता है कि कृषकों के सामने जो अनेक समस्याएं हैं उनका समाधान यथाशीघ्र किया जाए।

समस्याओं की बात आने पर कृषि साधनों को समय से जुटाना कृषि विकास की मूलभूत समस्या है। यदि हम यह योजना बनाते हैं कि अधिक पैदावार देने वाली किस्मों का प्रसार बढ़े और प्रति हैक्टर अधिक उत्पादन मिले, तो अच्छी प्रजाति के उन्नत व स्वस्थ बीजों को किसानों को समय से उपलब्ध करना होगा। हमारा विचार है कि राष्ट्रीय बीज निगम की भांति राज्य बीज निगम की भी स्थापना की जाए और यही संस्था बीज प्रमाणीकरण का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले। इस प्रकार किसान विभिन्न स्रोतों से घटिया किस्म का बीज बोने के लिए विवश नहीं होंगे। प्रति हैक्टर

उत्पादन-वृद्धि सीमित संख्या में बड़े कृषकों के बल पर नहीं हो सकती है और न इससे राष्ट्र अथवा प्रदेश स्तर पर कृषि उत्पादन में वृद्धि हो सकती है। हम अपने लक्ष्य में तभी सफल हो सकते हैं जब छोटे किसानों का भी प्रति हैक्टर उत्पादन बढ़े।

उत्तर प्रदेश में इस समय लगभग एक करोड़ 27 लाख छोटे व सीमान्त कृषक हैं जो कुल जोती जाने वाली भूमि के 43% पर खेती करते हैं। इनके खेतों में सिंचाई के लिए पानी पहुंचाना शासन का कर्त्तव्य है और हमारी सरकार इस लक्ष्य के प्रति कटिबद्ध है। किसानों को समय और उचित मूल्य पर बीज मिल जाए तो कोई कारण नहीं कि वे इसका इस्तेमाल न करें। यही बात उर्वरकों के उपयोग के बारे में कही जा सकती है। उर्वरक को उत्पादन बढ़ाने का एक आवश्यक अंग तो माना गया है लेकिन प्रायः देखने में आया है कि छोटे किसान साधन के अभाव में या समय से उर्वरक न मिलने के कारण इसका सन्तुलित व समुचित उपयोग नहीं कर पाते। कृषि की नई-नई तकनीक में उर्वरकों का उपयोग "बेसल ड्रेसिंग" या "टाप ड्रेसिंग" के रूप में करने की संस्तुति की जाती है परन्तु छोटे किसान निर्धनता के कारण पूरी मात्रा का उपयोग नहीं कर पाते। प्रश्न उठता है कि उन किसानों को साधन सम्पन्न कैसे बनाया जाए? एक बात यह भी साफ है कि निर्धनता के कारण छोटे काश्तकार कृषि में उन्नत बीज, सन्तुलित उर्वरक तथा कृषि रक्षा उपायों का उपयोग करके जोखिम उठाने की स्थिति में नहीं हैं। उन्हें बराबर यह डर बना रहता है कि बाढ़-सूखा, ओला-पाला आदि प्राकृतिक आपदाओं से उन की फसल नष्ट न हो जाए। इसी भय से वे परम्परागत कृषि को छोड़कर नई पद्धति अपनाने के लिए प्रायः तैयार नहीं होते हैं। अतएव आवश्यक है कि कृषि बीमा जैसी योजना चलायी जाए। प्रसन्नता की बात है कि केन्द्र सरकार इस समस्या के प्रति जागरुक है।

कृषि उत्पादन के साथ-साथ उसका भण्डारण और उचित मूल्य पर विक्रय भी किसानों से सीधा सम्बन्ध रखता है। यद्यपि टीन की नई बखारियों का प्रचलन प्रदेश में किया जा रहा है तथापि इसमें गति लाने के लिए हमें पूरा प्रयास करना होगा ताकि मेहनत से पैदा किया गया अनाज सीलन, घुन या अन्य कीटों द्वारा बरबाद न हो सके। विशेषज्ञों का अनुमान है कि सम्पूर्ण उत्पादन का लगभग 15% अन्न भण्डारण की समुचित व्यवस्था न होने के कारण बरबाद हो जाता है। यह भी आंकड़ों से सिद्ध है कि लगभग इतनी ही पूर्ति से देश में अनाज की कमी को पूरा किया जा सकता है। कृषकों को उनके उत्पादन का समुचित मूल्य दिलाने के लिए कुछ प्रमुख खाद्यान्नों का समर्थन मूल्य निर्धारित किया जाता है फिर भी विपणन की व्यापक व्यवस्था के अभाव में किसानों को अपनी उपज का समुचित मूल्य नहीं मिल पाता। जहां शासन का यह कर्तव्य है कि उपभोक्ताओं को खाद्यान्न जैसी दैनिक आवश्यकता की वस्तु उचित मूल्य पर मिले वहां यह भी देखना होगा कि कृषक अपने परिश्रम और लागत का न्यायसंगत लाभ पाने से वंचित न रह जाए। हमारा यह उद्देश्य है कि उत्पादक और उपभोक्ता दोनों के हित को ध्यान में रखा जाए।

कृषि क्षेत्र में जो अनुसंधान कार्य हो रहा है उसको प्रयोगात्मक रूप से किसानों तक पहुंचाने का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है। मैं समझता हूं कि विभिन्न अनुसंधान केन्द्रों में होने वाले कृषि की नवीन विधियों अथवा तकनीक के प्रसार की समुचित व्यवस्था नहीं है। अनुसंधान केन्द्रों से सम्बन्धित जो प्रसार क्षेत्र हैं उन्हें बहुत सीमित कहा जाएगा। दूर-दूर गांवों में छोटे-छोटे किसानों तक अनुसंधान द्वारा निकाले गए निष्कर्ष का प्रयोग करना होगा और इसके लिए प्रसार साधन क्या होंगे, इस पर भी हमें विचार करना है। उत्तर प्रदेश में 3 कृषि विश्व-विद्यालय हैं जिनमें विशेषज्ञों की देख-रेख में किए जाने वाले कार्य का लाभ सामान्य कृषकों तक पहुंचाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

कृषि में नए मोड़ की आवश्यकता इसलिए है कि गांवों के जिन परिवारों में पैतृक रूप से कृषि व्यवसाय होता रहा है, वहां के पढ़े लिखे युवक कृषि कार्य को अरुचिकर समझते हैं। गांव से शहर की ओर भागने की प्रवृत्ति का मूल कारण यही है। स्पष्ट है कि कृषि को जहां हमारे प्रदेश और देश की अर्थ-व्यवस्था का मूलाधार कहा जाता है वही उस व्यवसाय को अपनाने के लिए गांवों का युवा वर्ग तैयार नहीं है। इस दिशा में कृषि विशेषज्ञों को ही नहीं बल्कि सभी चिन्तनशील व्यक्तियों को विचार करना है कि कृषि को अन्य व्यवसायों की तरह रूचिकर कसे बनाया जाए? जनता सरकार इस लक्ष्य के प्रति कटिबद्ध है कि हमारी अर्थ-व्यवस्था ग्रामोन्मुख हो जैसा कि हमारे प्रधान मंत्री श्री मोरार जी देसाई ने कहा है कि "हम ऐसी व्यवस्था लाना चाहते हैं जबकि लोग गांवों से शहरों की ओर भागने के बजाए शहरों से गांवों में जाने के लिए लालायित होंगे।" ★

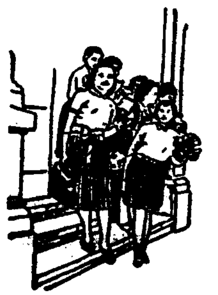

दो अक्तूबर का दिन था। सूरज काफी चढ़ आया था। 'सेवायतन' के एक घने बड़े वृक्ष के नीचे किसानों की एक छोटी टोली इकट्ठी हुई। यह स्थान झार ग्राम के उप-मंडल मुख्यालय से तीन मील की दूरी पर था। नौजवानों की छोटी छोटी टोलियां जिनमें अधिकांश 'अभिजात' वर्ग के थे और साफ सुथरी पोशाक में स्कूल के बच्चे भी वहां पहुंच गए। इस उमड़ती हुई भीड़ से ऐसा लगता था जैसा यहां कोई समारोह होने वाला था। पास में राजार बंध (किंग्स लेक) को सूर्य की सुनहरी किरणें पिछली शताब्दी से भी अधिक समय से आलोकित करती आ रही थीं लेकिन आज सूर्य ग्राम वासियों की असामान्य भीड़ पर उल्लास के साथ अपनी किरणें बिखेर रहा था। बंगाल के गांवों में सामुदायिक विकास के युग का श्रीगणेश हो रहा था।

उद्घाटन समारोह करने के लिए सेवायतन का स्थान मुझे भी पसन्द लगा। झार ग्राम के उपमंडल अधिकारी के पद का कार्यभार सम्भालने के तुरन्त बाद मैं इस संस्था को देखने गया था। उस समय तक मैंने केवल शान्ति निकेतन और श्री निकेतन के बारे में पढ़ा था। तब मैंने आगुन्तक पुस्तिका में लिखा, 'शान्ति निकेतन और श्रीनिकेतन सरीखी संस्थाओं की शुरूआत भी छोटे पैमाने पर हुई होगी।' इस संस्था के संस्थापक अध्यक्ष सत्यानन्द गिरि स्वयं कर्म और सेवा की भावना से ओत-प्रोत थे।

अगस्त मास में कार्यभार सम्भालने के तुरन्त बाद मैंने सुना कि झार ग्राम में एक बड़ा ग्राम विकास कार्यक्रम शुरू होने जा रहा है। यह कार्यक्रम क्या है या उसे कौन चलाने जा रहा है, इस कार्यक्रम को झार ग्राम के राजा चला रहें हैं, क्योंकि वहां कोई अच्छा कार्य राजा द्वारा ही किया जाता था। कुछ का कहना था, यह अमरीकी सहायता थी। मैं समझता था कि मेरे सरकल अधिकारी को अवश्य ही इसकी जानकारी होगी। उन दिनों बंगाल के प्रशासन में तहसीलदार और पटवारी के अलावा, सरकल अधिकारी ही ऐसा व्यक्ति था जिसे सभी मामलों में 'आवश्यक उपाय' और 'आवश्यक कार्यवाही' करनी होती थी। उन्हें तो यही मालूम था कि बैता यूनियन बोर्ड के अध्यक्ष कह रहे थे कि यदि सरकार उनकी बात सुने तो उनके पास सारे इलाके की सिंचाई के लिए एक योजना थी। बैता गांव कंगसावती नदी के किनारे स्थित है। जब मेरी यूनियन बोर्ड के अध्यक्ष के साथ चर्चा हुई, उनका समाधान मुझे सरल और मानने लायक दिखाई दिया। आलस्य ही के कारण लोग पानी नहीं खींचते। यदि समीपवर्ती खेतों से दूसरी या तीसरी फसल प्राप्त होती है तो कंगसावती नदी से पम्पों द्वारा पानी निकालना ही होगा।

पच्चीस वर्ष पहले यह जो हुआ

के०पी०ए० मेनन

अपर सचिव, ग्राम विकास विभाग

सिंचाई इंजीनियर को आशुगिरि का सुझाव पसन्द नहीं आया। वे इस पर हंस पड़े। उनका कहना था कि गुरुत्व से पानी नीचे की ओर चला जाता है। पश्चिमी बंगाल में आज भी नदियों से पानी खींचने का अत्यधिक प्रचलन है। राज्य के कृषि आयुक्त के रूप में कार्य करते समय मैंने देखा कि लिफ्ट सिंचाई की संख्या हजारों से ऊपर थी। लेकिन हमने शुरूआत करने में एक दशाब्दी से भी अधिक समय नष्ट कर दिया था।

स्थिति बहुत ही जल्द स्पष्ट हो गयी। विकास आयुक्त ने राज भवन में एक बैठक बुलाई और सम्बन्धित कलक्टरों तथा उपमण्डल अधिकारियों को इस सम्बन्ध में सारी जानकारी दी गई। परियोजना कार्यकारी अधिकारी द्वारा बुलाई गई कार्यक्रम समिति की बैठक में यह निर्णय हुआ कि उद्घाटन समारोह में जनसहयोग पर अधिक बल देते हुए ग्राम विकास की गतिविधियों के सभी पहलुओं पर प्रकाश डाला जाए। तदनुसार कार्यक्रम तैयार किया गया था। खाद के गड्ढे खोदे गए जिनके डिजाइन वैज्ञानिक ढंग से तैयार किए गए थे, माडल गाय शैड का निर्माण कराया गया, उन्नत बीज और अच्छी नस्ल के पक्षी बांटे गए, पशुपालन विकास के कार्य की ओर ध्यान दिया गया, अन्य बहुत से कार्यक्रमों के साथ महिला मंडलों के माध्यम से प्रौढ़ शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रम भी शुरू किए गए थे। कुल मिला कर 23 कार्यक्रम थे। इनमें ग्रामवासियों द्वारा अपने प्रयत्नों से उद्घाटन समारोह के स्थान को जाने वाली गांव की सड़क का निर्माण करना भी शामिल है। तथापि, सड़क बनाने के काम से कुछ उत्साह पैदा हुआ। इसकी महत्ता मुझे कुछ समय बाद मालूम हुई। समारोह से एक दिन पहले सड़क तैयार नहीं हुई थी। परियोजना कार्यकारी अधिकारी यह चाहता था कि सड़क ग्रामवासियों के स्वैच्छिक प्रयत्नों से पूरी होनी चाहिए। कहीं विशिष्ट जीप धंस न जाए, सरकल अधिकारी ने उसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया था। उन्होंने इस सड़क को गांव के नम्बरदार के किराए के मजदूरों से पूरा करवाया। परियोजना कार्यकारी अधिकारी के प्रयत्नों से सड़क समय पर बनकर तैयार हो गयी। बाद में घटना का विचार आने पर मैंने सोचा कि उन में पुरानी और नई भावना का सम्मिश्रण था। व्यक्ति में दोनों का सम्मिश्रण होने से अच्छी भावना प्रायः उपयोगी हो सकती है। परियोजना कार्यकारी अधिकारी नई भावना के द्योतक थे जो कि सामुदायिक विकास कार्यक्रमों और पंचायती राज संस्थाओं में पाई जाती है। सरकल अधिकारी अनुशासित 'सिविल सरवेन्ट' की पुरानी परम्परा के प्रतीक थे। उनके लिए लक्ष्य महत्वपूर्ण था। हमारे ग्राम विकास कार्य-

क्रमों में प्रायः ऐसा होता है कि लक्ष्य नजरों से ओझल हो जाता है।

कई वर्ष बाद मैंने बर्दवान के कलक्टर के रूप में पश्चिमी बंगाल के पहले गहन कृषि जिला कार्यक्रम का कार्यभार सम्भाला था तब मैंने देखा कि सारा जिला राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों के अन्तर्गत पूरी तरह आ चुका था। इस कार्यक्रम के कार्यान्वियन से प्रत्येक राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड में तीन कृषि विस्तार अधिकारी थे और ग्रामसेवकों की संख्या दुगुनी हो गई थी। अतिरिक्त विस्तार स्टाफ की नियुक्ति अलग कार्यक्रमों के अधीन की जाती थी और साझें उत्पादन कार्यक्रम में उन्हें शामिल करने के लिए ठोस प्रयत्न करने पड़ते थे। खण्ड प्रशासन खण्ड में पाए जाने वाले जनशक्ति संबंधी साधनों का गठन करने के काम में कुछ अयोग्य सिद्ध हुआ। इसके विपरीत, विभिन्न विभागों के जिला स्तर अधिकारी राष्ट्रीय विस्तार सेवा प्रशासन से कोई विलक्षणता प्राप्त नहीं कर सके। कभी-कभी तो वे इस विचार के खिलाफ थे।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के शुरू होने के बाद के दस वर्षों में मुझे यह भी दिखाई दिया कि बहुत से खण्ड विकास अधिकारी और विस्तार कर्मचारी कृषि की मुख्य धारा से हट गए थे। ग्राम सेवक की बहु प्रयोजनीय भूमिका बहुत अधिक हो गई थी। इसके परिणामस्वरूप वे आमतौर पर विविध सेवा अधिकारी बन कर रह गए थे। राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्डों की संख्या में अचानक वृद्धि होने से विभिन्न विभागों से सम्बन्धित अधिकारियों के प्रवेश की आवश्यकता पैदा हो गई थी—अधिकांश को खण्ड विकास अधिकारी के संवर्ग में ग्राम विकास से सम्बन्धित कोई कार्य नहीं करना था। यह कठिनाई कई राज्यों में आज भी चल रही है।

गहन कृषि कार्यक्रम ने, निस्सन्देह, समयबद्ध उत्पादन कार्यक्रम बनाने की आवश्यकता को उजागर किया था। तथापि, खण्ड स्तर पर लक्ष्य-उन्मूलक पहुंच का अभाव था। सामान्यतया, लक्ष्य किसी दूर-दराज स्थान पर निर्धारित किए जाते थे नियमित रूप से सूचित किए जाते थे। खण्ड कर्मचारियों को शायद ही योजना प्रक्रिया में सम्मिलित किया गया जिससे उसके कार्यान्वियन में बाधा पड़ी। लेकिन यह स्पष्ट था कि देश में बहुत से भागों में आधुनिक विज्ञान और टेकनालोजी को खेतों तक पहुंचाया जा रहा था। कहीं कहीं तो द्रुत गति के साथ अन्यथा पशिचिमी बंगाल में गेहूं क्रान्ति नहीं आई होती। जब पैकेज कार्यक्रम की आरम्भिक अवस्था में हमने एक अतिरिक्त फसल के रूप में या ग्रीष्म धान के स्थान पर जबकि जल साधनों की तंगी थी, गेहूं की खेती करने के लिए कहना शुरू किया था तब किसानों ने कहा था 'यह पंजाब नहीं है बाबू।'' जनवरी 1973 में पंजाब के एक प्रगतिशील किसान ने पश्चिमी बंगाल कृषि-उद्योग निगम के अनुरोध पर पश्चिमी बंगाल के गेहूं पैदा करने वाले क्षेत्रों का दौरा किया था। उसने अपने दौरे के अन्त में कहा कि "पंजाब के गांवों में जो कुछ तीन वर्ष पहले हुआ था, बंगाल में आज हो रहा है।'' तीन वर्ष पीछे होना किसान के लिए कोई लज्जा की बात नहीं है क्योंकि पूर्वी भारत में पहले गेहूं की खेती कभी नहीं हुई थी।

राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड को अब देश में सभी ग्राम विकास कार्यक्रमों के प्रशासन की इकाई के रूप में स्वीकार कर लिया गया है। खण्ड स्तर पर योजना बनाने की प्रक्रिया पर पहले से विचार हो रहा है। तथापि, हम आलोचना से बच नहीं सकते हैं कि इस समय खण्डों की ओर पूरा ध्यान नहीं दिया जा रहा है। शुरू में राज्य सरकारें यह महसूस किया करती थीं कि सामुदायिक विकास प्रशासन और राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रमों की जिम्मेदारी मुख्यतया केन्द्र पर है। आज खण्ड राज्य के प्रशासन की एक इकाई है लेकिन यह इकाई प्रायः अस्पष्ट जोन में आती है। बहुत से खण्डों के कार्यालयों की अपनी बिल्डिंग नहीं है, उनके मुख्यालयों तक सड़कें नहीं हैं और उनमें आवश्यक सुविधाओं का अभाव है। विभिन्न विकास कार्यक्रमों के लिए पूंजी निवेश किया जा रहा है लेकिन जो एजेन्सी इन के कार्यान्वियन में मदद कर सकती है उसकी अवहेलना हो रही है।

गांव सहकारी समितियां, पंचायत और खण्ड प्रशासन—ये तीन हमारे गांवों का कायापलट करने के लिए प्रभावशाली उपकरण हैं। जहां तक गांव सहकारी समितियों का सम्बन्ध है, इन्हें किसानों की सारी जरूरतों को देखना होगा और उन्हें एक ही स्थान पर सेवाएं सुलभ करनी होंगी। वे सुप्रवन्धित हों और अपने पांव पर खड़े होने में समर्थ होनी चाहिए। पंचायतों को क्रियाशील बनाना होगा और यथार्थ में उन्हें जन-संगठन होना चाहिए। सामुदायिक विकास प्रशासन को जन संस्थाओं के साथ मिलकर प्रायः उनके माध्यम से कार्य करना चाहिए। पचीस वर्ष की अवधि बहुत कम है, यह नहीं कहा जा सकता कि हम असफल रहे लेकिन फिर भी हमारे अनुभवों की दृष्टि से यह काफी लम्बी अवधि है।

अनुवादक — कृष्ण कुमार

ग्रामीण विकास : नियोजन-नीति में मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता

प्रदीप कुमार मेहता

किसी भी देश के आर्थिक विकास के लिए यह जरूरी है कि उस देश में विकास के लिए आवश्यक सभी तत्व उपलब्ध हों। विकास के लिए आवश्यक तत्वों में अधःसंरचना काफी महत्वपूर्ण है। भारत जैसे ग्राम-प्रधान देशों में अधः संरचना का विकास उस समय तक प्रभावी नहीं हो सकता जब तक कि उसको ग्रामीण क्षेत्रों तक न फैला दिया जाए। अतः नियमित रूप से आर्थिक विकास के लिए ग्रामीण अधःसंरचना को विकसित किया जाना आवश्यक है। सामान्यतः अधः संरचना को दो भागों में बांटा जाता है—सामाजिक अधः संरचना तथा आर्थिक अधःसंरचना। सामाजिक अधः संरचना में मुख्यतः शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास व्यवस्था आदि विषय सम्मिलित होते हैं। आर्थिक अधःसंरचना के मूल विषयों में परिवहन, संचार, विद्युत् आदि शामिल होते हैं। सामाजिक व आर्थिक दोनों प्रकार की अधःसंरचना को अलग-अलग लेने के आधार पर यह कहना गलत होगा कि ये दोनों प्रकार की अधःसंरचना एक दूसरे से अप्रभावित रहती हैं। वास्तव में आर्थिक संरचना के विकास से सामाजिक संरचना विकसित होने का मार्ग बनता है जबकि सामाजिक अधः संरचना के विकास से आर्थिक अधः संरचना के तीव्र विकास में सहायता मिलती है। अतः अधःसंरचना को दो भागों में विभाजित करने का तात्पर्य यह नहीं है कि एक के तीव्र विकास के लिए दूसरे के विकास को धीमा किया जाए बल्कि कहने का तात्पर्य यह है कि इस प्रकार का विभाजन करके दोनों प्रकार की अधःसंरचनाओं की तीव्र गति से समन्वित विकास तेजी से किया जा सकता है।

भारतीय नियोजन के पिछले 25 वर्षों का अनुभव यह बतलाता है कि यद्यपि अधः संरचना के विकास पर ध्यान दिया गया पर वह अर्थ-व्यवस्था जरूरत के मुताबिक नहीं था। प्रथम योजना में सार्वजनिक क्षेत्र में कुल व्यय का 23% सामाजिक सेवाओं पर व्यय किया गया जबकि द्वितीय योजना में इसे घटा कर 18% कर दिया गया। तृतीय योजना में इसमें कोई वृद्धि नहीं की गई। चौथी योजना में इसे बढ़ा कर पुनः 10% कर दिया गया। पांचवी योजना की स्थिति भी चौथी योजना के समान ही रही। सामाजिक सेवाओं के साथ ही विद्युत् तथा परिवहन व संचार के लिए व्यय-प्रावधान किए गए। कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि नियोजन के पिछले पच्चीस वर्षों में अधः संरचना के विकास पर कुल साधनों का लगभग एक तिहाई व्यय किया गया जिससे इस दिशा में काफी प्रगति नहीं हुई।

परंतु अधः संरचना का कुल विकास काफी असंतुलित रहा। निरपेक्ष दृष्टि से देखा जाए तो आवश्यकता के हिसाब से अधः संरचना का विकास धीमा रहा। इसके परिणामस्वरूप प्रति व्यक्ति अधः संरचना में अपेक्षित वृद्धि नहीं हो पाई। फिर यह भी देखने में आया कि अधः संरचना को विकसित करने के अधिकांश प्रयास मुख्यतः शहरी क्षेत्रों में केंद्रित रहे। इसके परिणामस्वरूप जहां एक ओर ग्रामीण क्षेत्रों की अधः संरचना पिछड़ी रह गई वहां दूसरी ओर ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में उपलब्ध अधः संरचना में काफी अंतर आता चला गया। उच्च शिक्षा, महंगी व जटिल चिकित्सा सुविधा, पक्की सड़कें, रेलवे, विद्युतीकरण आदि क्षेत्रों में यह असमानता काफी अधिक रही। अधः संरचना के इसी विकास के कारण श्रम बल, ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर बहता चला गया और शहरी क्षेत्रों पर जन बल तथा श्रम बल में निरंतर वृद्धि होती चली गई।

भारतीय अर्थ व्यवस्था के इस विकास को ध्यान में रखते हुए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अब नियोजन नीति में मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता है। अब नियोजन का मूल लक्ष्य अधः संरचना के विकास को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिए कि जहां शहरी क्षेत्रों में अध संरचना आवश्यकता के अनुसार विकसित होती रहे वहां ग्रामीण क्षेत्रों में अधः संरचना का विकास तीव्र गति से किया जाए ताकि दोनों क्षेत्रों में अंतर को घटाया जा सके व ग्रामीण क्षेत्र के आर्थिक विकास को तीव्र किया जा सके। चूंकि हमारा उद्देश्य शहरी अधः संरचना की लागत पर ग्रामीण अधः संरचना का विकास करना नहीं है, अतः शहरी अधः संरचना पर व्यय प्रावधानों में बड़ी कटौती करके ग्रामीण अधः संरचना पर व्यय बढ़ाने की नीति को कार्य रूप नहीं दिया जा सकता। ऐसी स्थिति में संपूर्ण प्राथमिकता प्रावधानों में इस प्रकार परिवर्तन करने होंगे कि अधः संरचना के विकास के लिए अतिरिक्त साधनों की व्यवस्था की जाए और इस प्रकार प्राप्त अतिरिक्त साधनों को ग्रामीण क्षेत्रों में अधः संरचना के विकास पर केंद्रित किया जाए। स्पष्टतः इसके लिए संपूर्ण नियोजन-नीति में मूलभूत परिवर्तन करने होंगे।

ग्रामीण व शहरी अधः संरचना के विकास का अंतर घटाने के लिए 'भारी उद्योग प्रधान' अर्थ व्यवस्था में परिवर्तन करना होगा। इस नीति के क्रियान्वयन से न सिर्फ शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों की अधः संरचना के स्तर में अंतर कम होगा बल्कि ग्रामीण क्षेत्रों में फैली बेरोजगारी व अल्प बेरोजगारी को समाप्त करके ग्रामीण लोगों की प्रति व्यक्ति आय में तीव्र वृद्धि कर पाना संभव होगा। इस प्रयास से शहरी क्षेत्रों पर बढ़ते हुए श्रम-बल को नियंत्रित करने में भी सफलता मिल सकेगी क्योंकि ग्रामीण श्रम बल को गांवों में ही रोजगार उपलब्ध करवा के उनके शहरी क्षेत्रों में पलायन को रोका जा सकेगा।

इस संशोधित नीति के अंतर्गत भारी उद्योगों पर उतना ही व्यय किया जाएगा

कि यह क्षेत्र अर्थ व्यवस्था के अन्य प्रमुखता प्राप्त क्षेत्रों (कृषि, सामाजिक सेवाएं, लघु उद्योग) की आवश्यकता को पूरा कर सके। इसी तरह उपभोक्ता वस्तुओं के क्षेत्र में आधार-भूत उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन को प्राथमिकता दी जाएगी। विलासिता व अन्य वस्तुओं का उत्पादन मूलत: निर्यात-आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किया जाएगा। इस नीति के क्रियान्वयन से सीमित साधनों से ही ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए अतिरिक्त साधन उपलब्ध हो सकेंगे। उद्योग क्षेत्र में जो साधन व्यय किए जाएंगे, उनमें लघु उद्योगों को विशेष महत्व दिया जाएगा।

ग्रामीण क्षेत्रों में लघु उद्योगों व अन्य संबंधित क्षेत्रों के विकास के लिए कई आधारभूत सुविधाओं का विकास करना होगा। उदाहरणस्वरूप सामान्य कारीगर व कृषक की नवीनतम उत्पादन विधियों की नियमित जानकारी प्राप्त होती रहनी चाहिए। इस नियमित जानकारी के प्रसार की व्यवस्था करने के लिए न सिर्फ ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का प्रसार करना होगा वरन शिक्षा ढांचे को भी संशोधित करना होगा। वर्तमान सैद्धांतिक अध्ययन व्यवस्था आम कारीगर व श्रमिक के लिए अनपयुक्त है। यदि ग्रामीण अध: संरचना के विकास के अंतर्गत यदि सिर्फ वर्तमान शिक्षा व्यवस्था को फैला दिया गया तो न सिर्फ साधन व्यर्थ जाएंगे वरन शहरी शिक्षित बेरोजगारी की समस्या ग्रामीण क्षेत्रों में फैल कर विस्फोटक स्थिति उत्पन्न कर देगी। अत उनके लिए व्यावहारिक शिक्षा की व्यवस्था करनी होगी जो उन्हें निरंतर अपनी कार्य-कुशलता बढ़ाने में मदद कर सके और उनके लिए रोजमर्रा की उपयोगिता रखती हो।

इसी प्रकार, कच्चे माल व निर्मित माल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाने व ले जाने के लिए पर्याप्त सुविधाएं होनी चाहिएं। इस सुविधा का विकास भी परंपरागत ढंग पर नहीं हो पाएगा। यह तो सही है कि इस कार्य के लिए ग्रामीण क्षेत्रों को शहरी क्षेत्रों से जोड़ने के लिए सड़कों का जाल बिछाना होगा। लेकिन आधुनिक परिवहन साधन (ट्रक, ट्रैक्टर आदि) जो एक बार में बहुत ज्यादा सामान ले जा सकते हैं, अधिक कारगर सिद्ध नहीं हो पाएंगे। लघु उद्योग प्रधान अर्थव्यवस्था के लिए अधिक से अधिक परंपरागत वाहनों पर ही निर्भर रहना होगा। ऐसी स्थिति में यह उचित होगा कि इन वाहनों की संरचना में इस प्रकार परिवर्तन किया जाए कि इनकी गति व उपयोगिता बढ़ाई जा सके। इस व्यवस्था का तात्पर्य यह नहीं है कि अर्थव्यवस्था को भारी वाहनों की जरूरत नहीं है। ज्यादा दूरी व बड़ी मात्रा में माल की ढुलाई परंपरागत वाहनों से नहीं की जा सकती। इसके लिए भारी वाहनों की आवश्यकता बनी रहेगी लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे व कम मात्रा वाले सामान की ढुलाई में परंपरागत वाहन ज्यादा महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। अत: भारी वाहनों के साथ, इन परंपरागत वाहनों की उपेक्षा नहीं की जा सकती।

स्वास्थ्य सुविधा व आवास व्यवस्था सामाजिक अध: संरचना के अन्य महत्वपूर्ण विषय हैं। इन दोनों की व्यवस्था से जीवन स्तर में सुधार होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा सुविधा की अभी भी स्थिति संतोषप्रद नहीं है। यही कारण है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कारीगरों व श्रमिकों की उत्पादकता शहरी क्षेत्रों की तुलना बहुत कम है। ग्रामीण चिकित्सालयों में जटिल व मंहगी चिकित्सा की सुविधा नहीं के बराबर है। आज शहरों में जितने बड़े-बड़े चिकित्सालय नजर आते हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में एक भी नजर नहीं आता। इसी प्रकार स्वास्थ्यप्रद आवास व्यवस्था के क्षेत्र में भी ग्रामीण क्षेत्र पिछड़े हुए हैं। आवास व्यवस्था के अब तक के हमारे सारे प्रयास बड़े शहरों में केंद्रित रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में इस दिशा में नहीं के बराबर प्रयास किए गए हैं। फिर जो प्रयास किए गए हैं वे अधूरे हैं। वहां या तो जमीन बांट दी गई है या बहुत थोड़ी मात्रा में ऋण दिया गया है। ग्रामीणों की निम्न आर्थिक स्थिति के इन प्रयासों का विशेष लाभ नहीं हुआ। इन क्षेत्रों में आवश्यकता इस बात की है कि सामूहिक रूप से सस्ते मकान तैयार करवाए जाएं और वे वितरित किए जाएं। इससे जहां साधनों को व्यवस्थित करने में मदद मिलेगी वहां समस्या के ठोस हल प्राप्त किए जा सकेंगे। जब तक ग्रामीण क्षेत्रों में इन सुविधाओं का विस्तार नहीं किया जाता तब तक ग्रामीण कारीगरों व अन्य कार्यकर्त्ताओं की कार्यक्षमता में तीव्र वृद्धि की आशा नहीं की जा सकती। कार्यक्षमता में वृद्धि होने पर ही उत्पादकता व उत्पादन में वृद्धि की आशा की जा सकती है।

स्पष्टत: यदि उत्पादन केंद्रों को शहरों से गांवों में फैलाना है तो सामाजिक व आर्थिक दोनों प्रकार की अध: संरचना का तीव्र गति से विकास होना आवश्यक है। एक बार अध: संरचना के विकसित हो जाने पर जैसे-जैसे ग्रामीण क्षेत्रों के विकास पर अधिकाधिक निवेश किया जाएगा वैसे वैसे ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों के मध्य पाई जाने वाली असमानता में कमी कर पाना संभव हो सकेगा।

इस नई नीति व्यवस्था को ध्यान में रख कर हाल ही में इंडियन रिनांसा इंस्टिट्यूट देहरादून ने एक बीस वर्षीय योजना (1978-79 से 1998-99) प्रस्तुत की है। इसी मसिवदे में प्रथम 10 वर्षों (1978-79 से 1988-89) के लिए ठोस योजना प्रस्तुत की गई है। योजनाकारों का मत है कि यदि इस योजना को क्रियान्वित किया जाए तो देश में संपूर्ण आर्थिक प्रगति इस प्रकार होगी कि 20 वर्षीय काल में प्रति व्यक्ति वार्षिक आय में 152·76% की वृद्धि होगी (1974-75 के मूल्यों पर 1978-79 में 1387·10 रु० से 1998-99 में 3506·00 रु०)। दस वर्षीय काल में यह वृद्धि 57% की वृद्धि होगी (1974-75 के मूल्यों पर 1978-79 में 1387·10 रु० से 1988-89 में 2198·86 रु०) जिसमें से निर्धनतम 40% जनसंख्या की प्रति व्यक्ति आय में 90·10% की वृद्धि होगी (520.17 रु० से

963.48 रु०) । प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि के ये अनुमान योजना के निम्न उद्देश्यों के साथ हैं—(*i*) बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए आधारभूत आवश्यकताओं की वस्तुओं की न्यूनतम मात्रा उपलब्ध करवाई जाएगी, (*ii*) रोजगार संभाव्यताओं में इस प्रकार विस्तार होगा कि सबको रोजगार प्राप्त हो, (*iii*) विभिन्न विकास कार्यक्रमों के प्रतिफलों के न्यायपूर्ण वितरण की व्यवस्था की जाएगी तथा (*iv*) निम्नतम 40% जनसंख्या से निर्धनता उन्मूलन के विशेष प्रयास किए जाएंगे । इस प्रकार योजना में इस बात का प्रावधान है कि योजना के सफलता पूर्वक क्रियान्वयन के बाद सभी लोगों के लिए एक न्यूनतम स्तर की आधारभूत सुविधाएं—भोजन, मकान, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा तथा जल पूर्ति... उपलब्ध करवाई जाएंगी ।

योजना में शिक्षा व स्वास्थ्य सेवा में व्यय प्रावधानों में काफी अधिक वृद्धि की गई है । विभिन्न आय वर्गों के मध्य उसका वितरण इस प्रकार किया जाएगा- 40% निर्धनतम जनसंख्या की शिक्षा पर प्रति व्यक्ति 18 रु० तथा चिकित्सा पर प्रति व्यक्ति 15 रु० खर्च किए जाएंगे । यह तो स्पष्ट है कि भारत में निर्धनतम वर्ग का एक बहुत बड़ा भाग गांवों में रहता है और जब वह गांवों में शून्य रोजगार संभावना पाता है तो शहरी क्षेत्रों में एकत्रित होने लगता है । अतः यदि ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक सेवाओं व अन्य माध्यमों से उन्हें रोजगार व अन्य सुविधाएं उपलब्ध करवादी जाएं तो उनके शहरों की ओर पलायन की प्रवृति नियंत्रित की जा सकेगी । उद्योगों के क्षेत्र में योजना का मूल केन्द्र कृषि पर आधारित लघु उद्योग है । इस प्रयास से कृषि क्षेत्र पर जमे अत्यधिक श्रम बल को गैर कृषि क्षेत्र की ओर मोड़ा जा सकेगा । योजना प्रावधानों के अनुसार, 1978-79 से 1988-89 के दस वर्षीय काल में कृषि पर से 6.424 करोड़ लोगों को हटा कर उद्योग व सेवा में लगाया जाए । इसमें इस काल में श्रम बल में होने वाली वृद्धि को भी जोड़ लिया गया है । यदि श्रम बल में होने वाली वृद्धि को छोड़ दिया जाए तो दस वर्षीय काल में 19.3 लाख लोग कृषि-क्षेत्र से गैर कृषि क्षेत्र में की ओर मोड़े जा सकेंगे ।

कुल मिला कर यह कहा जा सकता है कि नियोजन के 25 वर्षों के अनुभव के आधार पर सारी ऋणनीति में मूलभूत परिवर्तन की आवश्यकता है। विकास का केंद्र शहरों से हटा कर गांवों की ओर ले जाना होगा । गांवों के विकास के लिए सामाजिक व आर्थिक, दोनों प्रकार की अधः संरचना विकसित करनी होगी । ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के प्रसार के साथ शिक्षा की अधःसंरचना भी बदलनी होगी । मंहगी चिकित्सा सुविधाओं को कम लागत पर ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध करवाना होगा । ग्रामीण परिवहन व्यवस्था को उस क्षेत्र विशेष की आवश्यकता व परिस्थितियों को ध्यान में रख कर सुधारना होगा । कच्चे माल व अन्य उत्पादन सामग्री के समयानुकूल व तीव्र वितरण की सुचारु व्यवस्था करनी होगी । संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि जब तक ग्रामीण क्षेत्रों को विकास-प्रावधानों में महत्वपूर्ण स्थान नहीं दिया जाता तब तक देश के संतुलित विकास की आशा नहीं की जा सकती । ★

हालाँकि मैं बड़े-बड़े कारखानों के विरूद्ध नहीं हूं तो भी मेरा विश्वास है कि औद्योगीकरण के विकास के साथ भी गृह उद्योगों के प्रसार के लिए काफी गुन्जाइश रहेगी ।

महात्मा गांधी

प्रकाशन विभाग को छपाई और सजावट के लिए पुरस्कार

केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के प्रकाशन विभाग को इस वर्ष छपाई और सजावट की उत्तमता के लिए सात पुरस्कार दिए गये हैं। जिन पत्रिकाओं और पुस्तकों को छपाई व सजावट के लिए पुरस्कृत किया गया है, वे इस प्रकार हैं :-

प्रविष्टियों के नाम	श्रेणी	पुरस्कार
1 सरदार पटेल (हिन्दी)	पुस्तक (भारतीय भाषाएं)	प्रथम
2 आजकल (उर्दू) दिसम्बर, 1976	मासिक पत्रिका	प्रथम
3 आजकल (हिन्दी) (जुलाई, 1975)	मासिक पत्रिका	द्वितीय
4 योजना (अंग्रेजी) 14 जनवरी, 1977	पाक्षिक पत्रिका	द्वितीय
5 पश्चिमी हिमालय के भित्ति चित्र	कला पुस्तक (बहुरंगी)	विशेषता का प्रमाण पत्र
6 टाईगर	पुस्तक (अंग्रेजी)	,,
7 थिट्टम (तमिल)	पत्रिका (भारतीय भाषाएं)	,,

ग्रामीण क्षेत्र में सहकारिता वितरण

प्रणाली-संरचना आधार और प्रबन्ध

आर० एस० उमरे

आवश्यक उपभोक्ता पदार्थों की वितरण प्रणाली उतनी ही महत्वपूर्ण है जितनी कि उसकी उत्पादन पद्धति । समय समय पर अधिक अन्न उगाने तथा दैनिक जीवन की वस्तुओं पर अभी जोर दिया गया है परन्तु इन पदार्थों की वितरण प्रणाली पर उतना बल नहीं दिया गया है । वितरण प्रणाली मुख्यत: तीन भागों में विभाजित की जा सकती है । सार्वजनिक, निजी और सहकारी । सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत आवश्यक पदार्थ प्राप्त कर लिए जाते हैं और संग्रह करके वितरित किये जाते हैं । दुकानदारों और सहकारी समितियों दोनों को दी गई उचित मूल्य की दुकानों के माध्यम से वितरण किया जाता है । ऐसी बहुत सी अनिवार्य उपभोक्ता चीजें हैं जो निजी दुकानदारों और सहकारी संस्थानों दोनों को ही दी जाती हैं । सहकारी समितियों के सामाजिक, आर्थिक तथा जनतांत्रिक ढांचे को देखते हुए, यह आवश्यक समझा गया कि अनिवार्य उपभोक्ता पदार्थों के वितरण के कार्य को हाथ में लेने के लिए सहकारी समितियों को बढ़ावा दिया जाए ।

2. यद्यपि हमारे देश की अधिकांश जनसंख्या गांवों में रहती है, पिछले वर्षों में अनिवार्य उपभोक्ता पदार्थों को सहकारी संस्थाओं द्वारा वितरण के बारे में कोई विशेष प्रयत्न नहीं किए गए । फिर भी गांव के सहकारी संस्थानों ने अपने ही बलबूते पर यह काम किया । अतीत में बहुत थोड़ी संख्या में प्राथमिक विपणन समितियां और सेवा समितियां किसान सदस्यों को कृषि के विकास के लिए उर्वरक जैसी उपज बढ़ाने वाली चीजों के अलावा दैनिक प्रयोग की आवश्यक वस्तुएं गांव के लोगों को देतीं थीं ।

3. जब 1974 और बाद में आवश्यक वस्तुओं के दाम बेतहाश बढ़ने लगे तब सहकारी ग्राम्य सप्लाई प्रणाली के विकसित करने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी । कुछ आवश्यक वस्तुएं जैसे खाने के तेल, दालों आदि की कमी हो गयी । गांवों में आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण के लिए कोई कारगर और नियमित माध्यम बनाने का महत्व महसूस किया जाने लगा । इसलिए प्राथमिक सहकारियों को मजबूत बनाना आवश्यक समझा गया ताकि उपभोक्ता पदार्थों का व्यापार बढ़ाया जा सके और इस उद्देश्य के लिए खुदरा बिक्री के लिए गांवों में बहुत सी दुकानें खोली गयीं ।

4. उपभोक्ता पदार्थों के वितरण में गांवों की प्राथमिक विपणन समितियां और बहु-उद्देश्यीय समितियां पहले से ही काम करती रही हैं, अतः यह बेहतर समझा गया कि किसी नये संगठन को बनाने के बजाय आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण के लिए गांवों में वर्तमान संरचना आधार संगठन का ही उपयोग किया जाए । इस वर्तमान व्यवस्था को उपयोग में लाने का लाभ यह था कि वितरण प्रणाली के तौर-तरीकों के बारे में कुछ जानकारी तो थी ही और इसलिए नए बिक्री कर्मचारियों की आवश्यकता नहीं होगी । इसके, अलावा गांवों, में स्वतंत्र रूप से अलग दुकान खोलने में कोई तुक नहीं था क्योंकि इनके पास इतना अधिक व्यापार-धंधा नहीं होता कि वे मुनाफा कमाकर मजे में काम चला सकें । गांवों में उपभोक्ता वस्तुओं के वितरण के काम में लगभग 2,000 विपणन समितियां और 55,000 ग्राम सेवा सहकारी समितियां लगी हुई हैं ।

5. देश के विशाल आकार को देखते हुए जिसमें 6,00,000 गांव हैं, ग्राम्य वितरण की समस्याएं कारगर ढंग से वर्तमान समितियों से ही हल नहीं की जा सकतीं । दूसरी बात यह है कि 1 लाख 56 हजार ग्राम सेवा सहकारी समितियों में से केवल 55,000 ऐसी हैं जो यह काम कर रही हैं । इसलिए इस काम के लिए और अधिक संख्या में समितियों के बनाये जाने की गुंजाइश है और ये गांव के स्तर पर ही गठित की जायें । प्राथमिक विपणन समिति को गांव की सहकारी समितियों को माल पहुंचाने के काम में थोक व्यापारी की हैसियत से काम करना होता है । इसलिए सभी प्राथमिक समितियों को आने वाले समय में इस बात के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए । वे ग्रामीण वितरण प्रणाली द्वारा बढ़ती हुई ग्राम सेवा समितियों की आवश्यकताओं के अनुरूप काम कर सकें । ग्राम वितरण प्रणाली के दोहरे उद्देश्य हैं—एक तो अधिक ग्राम सेवा सहकारी समितियों और विपणन समितियों के लिए काम करें और दूसरे अपना धंधा बढ़ाएं । अनुमान है कि प्राथमिक विपणन समिति का वार्षिक ग्राम्य उपभोक्ता व्यापार कम से कम 10 लाख रुपये का और ग्राम सेवा सहकारी समिति का 1 लाख रुपये का होना चाहिए, तभी ये समितियां चल सकती हैं । फिर भी अनेक ऐसे राज्य हैं जहां सहकारिता के माध्यम से ग्राम वितरण नगण्य है । कुछ क्षेत्रों में गांव की सहकारी समिति का वार्षिक उपभोक्ता व्यापार मुश्किल से हजार रुपये का है । इससे पता चलता है कि और अधिक समितियों को जोरों से काम करने की जरूरत है और जहां कहीं इनके धंधे नगण्य हैं या बिल्कुल नहीं हैं वहां व्यापार के विस्तार की अधिक आवश्यकता है ।

6. पांचवीं पंचवर्षीय योजना में ग्राम्य उपभोक्ता गतिविधि पर जोर दिया गया था और उसमें सिफारिश की गई थी कि गांवों में व्यापार में लगी कुल राशि जो कि चौथी योजना में तीन अरब रुपये थी, उसे पांचवीं योजना के अनंतर बढ़ाकर छः अरब रुपया कर दिया जाए । स्वभावतः इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक था कि गांवों में उपभोक्ता वस्तुओं की

सप्लाई के लिए कारगर और नियमित माध्यम तैयार किए जाएं।

कमजोर वर्गों की सेवा

भारत की जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग कबायली और पहाड़ी इलाकों में रहता है। वे लोग सबसे गरीब हैं और आवश्यकता इस बात की है कि उनकी आवश्यकताएं सबसे पहले यानी प्राथमिकता के आधार पर पूरी की जाएं। इन कबायली और पहाड़ी लोगों में कुछ ऐसे हैं जो सुदूर क्षेत्रों में रहते हैं जहां अनिवार्य वस्तुएं प्रायः बहुत कम मिल पाती हैं और अगर हैं भी तो वे मंहगी हैं। निजी व्यापार करने वाला व्यापारी इन क्षेत्रों में जमा बैठा है और स्थिति का भरपूर लाभ उठाता है और इसका परिणाम यह होता है कि गरीब तबका ऐसे क्षेत्रों में निजी बेईमान व्यापारियों के चंगुल में फंस जाता है। ऐसे क्षेत्रों में गांव के गरीबों की क्रय शक्ति बहुत कम होती है। इन कारणों से इन लोगों को उचित दरों पर अनिवार्य वस्तुओं को मुहैया करने की मजबूत प्रणाली बनाने की सख्त जरूरत है। ऐसी प्रणाली में सहकारी समितियां महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती हैं।

साधनों में सुधार

8. भले ही खुदरा बिक्री कितनी ही अच्छी नियोजित हो, साज-सज्जा युक्त हो, ठीक जगह स्थित हो लेकिन अगर सामान सप्लाई करने का तरीका और व्यवस्था भरोसे योग्य न हो तो इसकी प्रतिष्ठा नहीं बन पाएगी और न ही आप इससे अधिक प्रगति की आशा कर सकते हैं। यह कहना गलत न होगा कि वितरण प्रणाली की आपूर्ति प्रणाली ही उसकी जीवन प्रणाली है। और यह बात ग्राम्य वितरण प्रणाली पर तो और भी खरी उतरती है क्योंकि वहां अनिवार्य उपभोक्ता पदार्थों की सुनिश्चित सप्लाई की और भी अधिक आवश्यकता है। गांव की सेवा समितियों तथा विपणन समितियों को यह सलाह दी गई है कि वे कपड़ा, चीनी, वनस्पति, चाय, नमक, माचिस, मिट्टी का तेल, खाने का तेल, अभावग्रस्त क्षेत्रों में खाद्यान्न, दाल, साईकिल, टायर ट्यूब आदि अनिवार्य वस्तुओं की बिक्री अपने हाथ में लें। इस प्रकार आवश्यकता क ये सब चीजें एक जगह मिल सकेंगी। आशा की जाती है कि विपणन समितियां इन सब चीजों को केन्द्रीय उपभोक्ता भंडार या राज्य उपभोक्ता संघ से लेंगी। जहां ये वस्तुएं सहकारी भंडारों में न मिलें तो वे निजी व्यापारियों से खुले बाजार में खरीदें पर ध्यान रहे कि जहां तक संभव हो उन्हें सहकारी समितियों से ही सामान लेने की सलाह दी जाती है ताकि सहकारी अनुशासन बना रहे और कमीशन आदि भी केवल सहकारी समितियों को मिले। चूंकि विपणन समितियां केवल केन्द्रीय समितियों के रूप में काम करेंगी "उन्हें अग्रणी संस्था" (लीड सोसायटी) का नाम दिया गया है। आशा की जाती है कि वे गांव की सेवा समितियों को माल पहुंचाने की व्यवस्था करेंगी जो कि पहले से ही खुदरा माल बेचती हैं। जहां विपणन समिति का गठन नहीं कया गया है या वह संतोषजनक ढंग से काम नहीं कर रही है, वहां एक थोक उपभोक्ता भंडार खोलने की सलाह दी जाती है जो कि एक अग्रणी संस्था के रूप में काम करेगा और गांव की सेवा समितियों को अनिवार्य वस्तुएं सप्लाई करेगा। राज्य उपभोक्ता संघ या राज्य विपणन संघ की शाखाएं यह काम अपने हाथ में ले सकती हैं। दूसरे शब्दों में, गांव के क्षेत्रों की उपभोक्ता आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, गांव और शहरी संस्थाओ के बीच का अंतर अथवा शहरी गांव और उपभोक्ता क्षेत्रों के बीच का अंतर खत्म कर दिया गया है। कालांतर में जब सहकारी क्षेत्र में बहुत सी खुदरा दुकानें चलने लगेंगी, तो एक क्षेत्रीय वितरण केन्द्र खोलकर इन खुदरा दुकानों की नियमित सप्लाई को सुनिश्चित करने की समस्या हल हो जायेगी। एक क्षेत्रीय वितरण केन्द्र कितने क्षेत्र की जिम्मेदारी संभालेगा, वह इस बात पर निर्भर होगा कि उसे कितनी खुदरा दुकानों को माल देना है और उनके व्यापार के बढ़ने की कितनी गुंजाइश है।

प्रबन्ध

9. इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि उपभोक्ता भंडारों को दृढ़ व्यापारी आधार पर काम करना चाहिए। यह तभी संभव है जबकि इसका प्रबन्ध प्रशिक्षित सेल्समेन (विक्रेताओं) के हाथ में हो। इन लोगों का प्रशिक्षण न केवल सहकारिता के सिद्धान्तों में हों बल्कि उन्हें व्यापारी तकनीकों का भी प्रशिक्षण दिया जाये। वे आदमी होने चाहिएं निष्ठावान्। उन्हें बाजार के रोजमर्रा के परिवर्तनों का ज्ञान हो।

10. भंडारों की वृद्धि और विकास के लिए पहली आवश्यक शर्त यह है कि सहकारिता में काम करने वाले सदस्यों ने उपभोक्ता सहकारिता के सिद्धांतों और व्यवहार की शिक्षा पाई हो। इस प्रकार यह भंडार की गतिविधियों का एक अविभाज्य अंग है। राज्य के सहकारी संघ इस समय गांव के क्षेत्रों के सदस्यों के हित के लिए शिक्षा कार्यक्रम चालू कर रहे हैं। सहकारी शिक्षा के सर्वांगीण कार्यक्रम का एक भाग है— उपभोक्ता सिद्धान्तों और व्यवहारों की शिक्षा। चूंकि अब ग्राम्य उपभोक्ता गतिविधि के विकास पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा हैं अतः गांवों में उपभोक्ता शिक्षा कार्यक्रम पर और अधिक ध्यान देना होगा इसके अलावा, कुछ चुने हुए क्षेत्रों के सदस्यों को शिक्षित करने के लिए विशेष कार्यक्रम के विषय में सोचना होगा। देश भर में लाखों उपभोक्ता सदस्यों को शिक्षित करने की समस्या एक भीषण काम है। सरकारी और गैर सरकारी स्तरों पर सर्वांगीण प्रयत्न करने होंगे ताकि कार्यक्रम में सफलता मिल सके। इस दिशा में श्रीगणेश पहले ही किया जा चुका है।

राजीव उनियाल
अनुवादक, हिन्दी विभाग
भा० कृ० अ० प०
नई दिल्ली

गांधी जी के आर्थिक सिद्धान्त अब भी उतने ही ताजे

यशपाल जैन

मानवीय अधिकारों की लड़ाई लड़कर और जीतकर जब गांधी जी दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे और राजनैतिक मंच पर आसीन हुए तो उन्होंने अपनी पैनी निगाह से देख लिया कि उनका देश एक-न-एक दिन स्वतंत्र होकर ही रहेगा, लेकिन उन्होंने यह भी देख लिया कि जब तक देश की बुनियाद पक्की नहीं होगी तब तक आजादी टिक नहीं सकेगी। इसलिए विदेशी सत्ता को हटाने के लिए जहां उन्होंने छोटे-बड़े आंदोलन चलाए, वहां रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा उन आर्थिक, सामाजिक, साम्प्रदायिक खाइयों को भी पाटने का उपक्रम किया, जो मनुष्य को मनुष्य से दूर करती थीं। सच यह है कि गांधी जी के लिए मानव सर्वोपरि था और उसी को केन्द्र-बिन्दु मानकर उन्होंने अपनी सारी नीतियों का निर्धारण और संचालन किया। वह मानवीय मूल्यों के उपासक थे। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्होंने उन्हीं मूल्यों को प्रतिष्ठित करने के लिए अहर्निश प्रयत्न किया। किसी ने कहा, आप नीति की बात करते हैं, और क्षेत्रों में नीति से ही चल जाए, राजनीति में नहीं चल सकती। जिस प्रकार प्रेम और युद्ध में जो कुछ होता है, ठीक ही होता है, उसी प्रकार राजनीति में भी जो कुछ होता है, जायज होता है। गांधी जी का उत्तर था, जिस राजनीति में नीति नहीं वह मेरे लिए त्याज्य है।

गांधी जी के आर्थिक सिद्धान्तों के पीछे भी उनकी यही दृष्टि रही। उनकी मान्यता थी:

1. सबके हित में अपना हित है।
2. सबको जीने और आजीविका का समान अधिकार है।
3. कोई भी काम छोटा या बड़ा नहीं है। सब एक-दूसरे के पूरक हैं।
4. मेहनत-मशक्कत की कमाई ही सच्ची कमाई है।

अपनी कल्पना के स्वराज्य का चित्र प्रस्तुत करते हुए गांधी जी ने यंग इंडिया में लिखा था :

'मेरे सपने का स्वराज्य गरीबों का स्वराज्य होगा। जीवन की जिन आवश्यकताओं का उपभोग राजा और अमीर लोग करते हैं, वे गरीबों को भी सुलभ होनी चाहिएं। इसमें फर्क के लिए स्थान नहीं हो सकता। लेकिन इस का यह अर्थ नहीं कि गरीबों के पास अमीरों के जैसे महल होनी चाहिए। सुखी जीवन के लिए महलों की कोई आवश्यकता भी नहीं। हमें महलों में रख दिया जाए तो हम घबरा जाएं, लेकिन गरीबों को जीवन की वे सामान्य सुविधाएं अवश्य मिलनी चाहिएं, जिनका उपयोग अमीर आदमी करता है। मुझे इस बात में तनिक भी संदेह नहीं कि हमारा स्वराज्य तब तक पूर्ण स्वराज्य नहीं होगा, जब तक वह गरीबों को ये सारी सुविधाएं देने की व्यवस्था नहीं कर देता।'

वस्तुतः गांधी जी गरीबों को अमीरों की अस्वस्थ प्रतिद्विन्द्विता में नहीं डालना चाहते थे। वह कहते थे कि यह मानना भूल है कि सुख अमीरी में हैं। सुख और दुःख तो मन पर निर्भर करता है। जो मन को जितना नियंत्रण में कर लेता है, वह उतना ही सुखी होता है। इसलिए उन्होंने सच्चाई और सादगी के जीवन को अच्छा माना और उसी पर जोर दिया।

भारत गांवों में बसता है। गांधी जी को इसमें रंच मात्र भी संदेह नहीं था कि देश का उत्थान गांवों के विकास पर निर्भर करता है। अपनी अर्थ-रचना में उन्हें गांवों को स्वयं पूरित इकाई बनाना अभीष्ट था, अर्थात् वह चाहते थे कि अपनी आवश्यकता की चीजें गांव स्वयं पैदा कर लें और मुट्ठी भर शहरों पर निर्भर न करें। 'हरिजन सेवक' में वह लिखते हैं :

'ग्राम-स्वराज्य की मेरी कल्पना यह है कि वह एक ऐसा पूर्ण प्रजातंत्र होगा जो अपनी अहम जरूरतों के लिए अपने पड़ोसी पर भी निर्भर नहीं करेगा, और फिर भी बहुत सी दूसरी जरूरतों के लिए-जिनमें दूसरों का सहयोग अनिवार्य होगा—वह परस्पर सहयोग से काम लेगा। इस प्रकार हरेक गांव का पहला काम यह होगा कि वह अपनी आवश्यकता का सारा अनाज और कपड़े के लिए कपास स्वयं पैदा कर ले'।

इस तरह गांधी जी विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था के पक्षपाती थे। वह नहीं चाहते कि थे देश के साधन एक ही स्थान पर अथवा मुट्ठी भर लोगों के हाथों में रहें। यदि कल-कारखाने या उद्योग-धंधे एक ही जगह पर केन्द्रीभूत रहेंगे तो एक ही बम उन्हें नष्ट कर सकता है, लेकिन यदि उद्योग-धंधों का जाल सारे देश में फैला रहेगा तो उन्हें नष्ट करने के लिए कितने बमों की आवश्यकता होगी।' गांधी जी का मूल उद्देश्य सारे देश को स्वावलम्बी बनाना था और यह विकेन्द्रीकरण के बिना संभव नहीं था।

आधुनिक युग यंत्रों का युग है। संसार के जिन राष्ट्रों ने अपना असामान्य विकास किया है, उन्होंने यंत्रों

का और औद्योगीकरण का भरपूर उपयोग किया है। कहा जाता है कि गांधी जी यंत्रों के विरूद्ध थे। यह सही नहीं है। उस सम्बन्ध में अपनी दृष्टि स्पष्ट करते हुए उन्होंने हिन्दी नव-जीवन में लिखा था :

'यंत्रों का भी स्थान है और यंत्रों ने अपना स्थान भी प्राप्त कर लिया है। लेकिन मनुष्यों के लिए जिस प्रकार की मेहनत करना अनियार्य होना चाहिए, उसी प्रकार की मेहनत का स्थान उन्हें ग्रहण नहीं कर लेना चाहिए। घर में चलाने लायक यंत्रों में सुधार किए जाएं तो मैं उसका स्वागत करूंगा, लेकिन मैं यह भी समझता हूं कि जब तक लाखों किसानों को उनके घर में कोई दूसरा धंधा करने के लिए न दिया जाए, तब तक हाथ-मेहनत से चर्खा चलाने के बदले किसी दूसरी शक्ति से कपड़े का कारखाना चलाना गुनाह है।'

आगे फिर वह कहते हैं।

'यंत्रों की ऊपरी विजय से चमत्कृत होने से मैं इन्कार करता हूं और मारक यंत्रों के मैं एकदम खिलाफ हूं। उसमें मैं किसी तरह का समझौता स्वीकार नहीं कर सकता लेकिन ऐसे सादे औजारों, साधनों या यंत्रों का, जो व्यक्ति की मेहनत को बचायें और झोंपड़ियों में रहने वाले लाखों-करोड़ों लोगों का बोझ कम करें, मैं जरूर स्वागत करूंगा।'

गांधी जी की आंखों के आगे से इंसान कभी ओझल नहीं हुआ।' हिन्दुस्तान के सात लाख गांवों में फैले हुए ग्रामवासियों रुपी करोड़ों जीवित यंत्रों के विरूद्ध इन जड़-यंत्रों को प्रतिद्वन्द्विता में नहीं आना चाहिए। यंत्रों का सदुपयोग तो यह कहा जाएगा कि इससे मनुष्य के प्रयत्न को सहारा मिले और उसे वह आसान बना दें। यंत्रों के मौजूदा उद्योग का झुकाव तो इस ओर ही बढ़ता जा रहा है कि कुछ इने गिने लोगों के हाथ में खूब सम्पत्ति पहुंचाई जाए और जिन करोड़ों स्त्री-पुरुषों के मुंह की रोटी छीन ली जाती है, उन बेचारों की जरा भी परवाह न की जाए।'

गांधी जी के आर्थिक सिद्धान्तों में सबल महत्वपूर्ण तथ्य शोषण को समाप्त करना था। वह ऐसे समाज के निर्माण के अभिलाषी थे, जिसमें कोई किसी का शोषण न करे, न अपना होने दे। अपने देश के मिल-मालिकों और मजदूरों को उन्होंने सदा इसी के लिए प्रोत्साहित किया। लेकिन वह जानते थे कि बड़े पैमाने पर उद्योगीकरण का अनिवार्य परिणाम स्पर्धा होती है और उससे जाने-अनजाने शोषण को जन्म मिलता है। इसी से वह कहते थे :

'मैं नहीं मानता कि उद्योगीकरण हर हालत में किसी भी देश के लिए जरूरी ही है। भारत के लिए तो वह उससे भी कम जरूरी है। मेरा विश्वास है कि आजाद भारत दुःख से कराहती हुई दुनिया के प्रति अपने कर्त्तव्य का ऋण अपने गाँवों को विकास करके और दुनिया के साथ मित्रता का व्यवहार करके और इस तरह सादा परन्तु उदात्त जीवन अपना कर ही चुका सकता है। धन की पूजा ने हमारे ऊपर भौतिक समृद्धि के जिस जटिल और शीघ्रगामी जीवन को लाद दिया है, उसके साथ 'उच्च चिंतन का' मेल नहीं बैठता। जीवन का सम्पूर्ण सौंदर्य तभी खिल सकता है, जब हम उच्च कोटि का जीवन जीना सीखें।'

लेकिन इससे यह न माना जाए की गाँधी जी बड़े-बड़े उद्योग-धन्धों के एकदम विरुद्ध थे। लघु-उद्योगों में वह व्यक्तिगत स्वामित्व के हिमायती थे। लेकिन कुछ उद्योग ऐसे भी तो थे, जिनका सम्बन्ध समुदाय से होना था। उनके लिए राज्य के स्वामित्व का समर्थन करते हुए गाँधी जी लिखते हैं—

'जहाँ कहीं भी लोगों को काफी बड़ी संख्या में मिल कर काम करना पड़ता है, वहाँ मैं राज्य की मालिकी की हिमायत करूंगा। उनकी कुशल या अकुशल मेहनत से जो कुछ उत्पन्न होगा, उसकी मालिकी राज्य के द्वारा उनकी ही होगी। लेकिन चूंकि मैं तो इस राज्य के अहिंसा पर ही आधारित होने की कल्पना कर सकता हूं इसलिए मैं अमीरों से उनकी सम्पत्ति बलपूर्वक नहीं छीनूंगा, बल्कि उक्त उद्योगों पर राज्य की मालिकी कायम करने की प्रक्रिया में उनका सहयोग मागूंगा। अमीर हों या कंगाल, समाज में कोई भी अछूत या पतित नहीं है। अमीर और गरीब दोनों ही एक राम के दो रूप हैं और सत्य यह है कि कोई कैसा भी हो, है तो वह मनुष्य ही।'

देश में आर्थिक समानता स्थापित करने के लिए गांधीजी ने अपने रचनात्मक कार्यक्रम में खादी, ग्रामोद्योग तथा स्वदेशी को प्रमुख स्थान दिया। खादी उनके लिए मात्र तन पर धारण करने का वस्त्र नहीं था, अपितु समाज में छोटे-बड़े की भावना को मिटाकर सब को मानवीय धरातल पर खड़ा करना था। ग्रामोद्योगों की उनकी योजना का ध्येय गाँवों की बरबादी को रोकना था। उन्होंने स्पष्ट कहा कि 'गाँवों का नाश होना है तो भारत का भी नाश हो जाएगा। उस हालत में भारत, भारत नहीं रहेगा। दुनिया को जो सन्देश उसे देना है, उस संदेश को वह खो देगा।' स्वदेशी के द्वारा वह देश के स्वाभिमान को जाग्रत करना और विदेशी स्पर्धा को बचाना चाहते थे। आजादी की लड़ाई के दिनों की विदेशी वस्त्रों की होली की स्मृति आज भी रोमांच से भर देती है। उसकी आग की लपटें मानों आज भी इस सत्य को उजागर करती हैं कि जिस देश के निवासी अपनी भूमि के साथ आत्मीयता का नाता नहीं जोड़ते, वह देश कभी

भी अपने पैरों पर खड़ा न ही हो सकता।

इसमें शक नहीं कि विज्ञान के इस युग में यातायात के साधनों ने देशों के बीच की दूरियां घटा दी हैं और पारस्परिक सहयोग का मार्ग खोल दिया है, फिर भी प्रत्येक राष्ट्र के लिए स्वावलम्बन का अपना महत्व है। परावलम्बी राष्ट्र सदा दूसरों पर आश्रित रहते हैं और परमुखापेक्षी राष्ट्र कभी स्वाभिमानी नहीं हो सकते। स्वाश्रयी होने की तो कल्पना भी नहीं की जा सकती।

गांधीजी की अर्थ-रचना में साध्य की शुद्धता ही पर्याप्त नहीं है, साधनों की शुद्धता भी उतनी ही आवश्यक है। लोगों ने उनसे कहा कि आखिर साधन तो साधन ही है। आम खाने के लिए पेड़ गिनने से क्या लाभ। गांधीजी का जवाब था, 'साधन ही सब कुछ है। लक्ष्य की शुद्धि ठीक उतनी ही होती है, जितने हमारे पास साधन शुद्ध होते हैं। गंदे साधनों से मिलने वाली-चीज भी गंदी ही होगी। इसलिए राजा को मारकर राजा और प्रजा एक से नहीं बन सकेंगे। मालिक का सिर काटकर मजदूर मालिक नहीं हो सकेंगे। यही बात सब पर लागू की जा सकती है।'

मौजूदा आर्थिक विषमता को दूर करके आर्थिक समानता लाने के लिए गांधीजी ने मुट्ठी भर हाथों में पूंजी को संचित रखने वालों को संरक्षता का सिद्धान्त दिया उन्होंने कहा, 'फर्ज कीजिए कि विरासत के या उद्योग-व्यवसाय के द्वारा मुझे प्रचुर सम्पत्ति मिल गई है। तब मुझे यह जानना चाहिए कि वह सब सम्पत्ति मेरी नहीं है। बल्कि उस पर मेरा तो इतना ही अधिकार है कि जिस तरह लाखों लोग गुजर करते हैं, उसी तरह मैं भी इज्जत के साथ अपनी गुजर भर करूं। मेरी शेष सम्पत्ति पर राष्ट्र का हक है और उसी के हितार्थ उसका उपयोग होना आवश्यक है। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन मैंने तब किया था, जब कि जमींदारों और राजाओं की सम्पत्ति के सम्बन्ध में समाजवादी सिद्धान्त देश के सामने आया था। समाजवादी इन सुविधा प्राप्त वर्गों को समाप्त कर देना चाहते हैं जब कि मैं यह चाहता हूं कि वे (जमींदार और राजे-महाराजे) अपने लाभ और सम्पत्ति के बावजूद उन लोगों के समकक्ष बन जाएं जो मेहनत करके रोटी कमाते हैं।...मौजूदा जीवन पद्धति का विलास जिसमें हरेक आदमी पड़ौसी की परवा किए बिना केवल अपने लिए जीता है, उसके स्थान पर सर्व कल्याणकारी नई जीवन-पद्धति का विकास करना है तो उसका सबके लिए निश्चित मार्ग यही है।'

इतना कहकर ही गांधीजो नहीं रुके। अपनी बात को और भी स्पष्टता से समझाते हुए उन्होंने कहा—

'आर्थिक समानता के लिए काम करने का मतलब है पूंजी और मजदूरी के बीच के झगड़ों को हमेशा के लिए मिटा देना। इसका अर्थ यह होता है कि एक ओर जिन मुट्ठी भर पैसे वाले लोगों के हाथ में राष्ट्र की सम्पत्ति का बड़ा भाग इक्ट्ठा हो गया है, उनकी सम्पत्ति को कम करना और दूसरी ओर जो करोड़ों लोग अधपेट खाते और नंगे रहते हैं, उनकी सम्पत्ति में वृद्धि करना। जब तक मुट्ठी भर धनवानों और करोड़ों भूखे रहने वालों के बीच बेइन्तहा अंतर बना रहेगा तब तक अहिंसा की बुनियाद पर चलने वाली राज्य व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। आजाद हिन्दुस्तान में देश से बड़े-बड़े धनवानों के हाथ में हुकूमत का जितना हिस्सा रहेगा, उतना ही गरीबों के हाथ मे भी होगा और तब नई दिल्ली के महलों और उनकी बगल में बसी हुई गरीब मजदूर-बस्तियों के टूटे-फूटे झोंपड़ों के बीच जो दर्दनाक फर्क आज नजर आता है, वह एक दिन को भी नहीं टिकेगा।

'अगर धनवान लोग अपने धन को और उसके कारण मिलने वाली सत्ता को खुद राजो-खुशी से छोड़कर और सबके कल्याण के लिए सबके साथ मिलकर बरतने को तैयार न होंगे तो यह तय समझिए कि हमारे देश में हिंसक और खूंख्वार क्रांति हुए बिना न रहेगी।'

'समाजवाद का आधार आर्थिक समानता है अन्याय पूर्ण असमानता की हालत में, जहां चंद लोग मालामाल हैं और सामान्य प्रजा को भर पेट भोजन भी नसीब नहीं होता, राम राज्य कैसे हो सकता है।'

संक्षेप में ये है गांधीजी के आर्थिक सिद्धान्त, जो आज भी उतने ही ताजे हैं, जितने उनके समय में थे। ★

—सस्ता साहित्य मंडल,
एन-77, कनाट सर्कस,
नई दिल्ली-110001

खेती का आधार - पशुधन ★ डा० रामगोपाल चतुर्वेदी

"भाई तोता राम जी,

तुम्हारा विवरण अच्छा लगा। मेरी आकांक्षा तो यह है कि हम इतने फल और इतनी भाजी पैदा करें, तो हमारे लिए पर्याप्त हो। यदि गोमाता के लिए घास आदि पैदा करें और आश्रम के लिए अनाज भो तो खेती के पूर्ण आदर्श को हम पहुंचें। इसमें थोड़ा ज्यादा खर्च भी हुआ तो भी मैं उसको सफल समझूंगा। लेकिन मैं जानता हूं कि यह सब मूर्ख की बकवाद है, खेती का काम सबसे कम किया और बातें सबसे मैंने इस बारे में ज्यादा की हैं। क्या करूं खेती उन्हीं चीजों में से है, जिसे करने का ख्याल मुझको आधी आयु बीतने पर आया।

बापू का आशीर्वाद
16-4-33

आज से करीब 45 साल पहले गांधी जी ने यह पत्र पंडित तोताराम जी को भेजा था, जो उनके साबरमती आश्रम में निवास करते थे। पत्र में खेती के जिस पूर्ण आदर्श का पूज्य बापू जी ने उल्लेख किया था, वह आज भी दिवा-स्वप्न है। हमारे देश को आजाद हुए 30 साल हुए, लेकिन हमने गांधी जी के उन आदर्शों और सिद्धांतों को भुला ही दिया। गांधी जी वैज्ञानिक तथा व्यावहारिक दृष्टि से सोचते-विचारते थे और देश की उन्नति का आधार वह गांवों की खुशहाली को मानते थे। जब देश की आबादी का 70% हिस्सा ग्रामों में बसता है, तब ग्रामों की खुशहाली के बिना देश कभी उन्नति की ओर अग्रसर नहीं हो सकता।

बुनियाद

आज भी गांधी जी के विचार हमारा पथप्रदर्शन कर सकते हैं। ग्रामों की हालत सुधारने के दो ही तरीके हो सकते हैं। एक तो खेती करने के आधुनिक तरीकों का व्यापक प्रसार और दूसरे गोवंश की विधिवत उन्नति। गोवंश की उन्नति का वैज्ञानिक तरीका यही हो सकता है कि गायों की नस्ल सुधारी जाए और ऐसी नस्लें तैयार की जाएं जो पर्याप्त मात्रा में दूध देने में समर्थ हों, और जिनसे मजबूत बैल भी मिल सकें। जैसा सब जानते हैं खेती के कार्यों के लिए आवश्यक शक्ति बैलों से ही प्राप्त होती है। बोझा ढोने के अलावा कृषि के अनेक कार्यों में बैलों का योग किसी न किसी

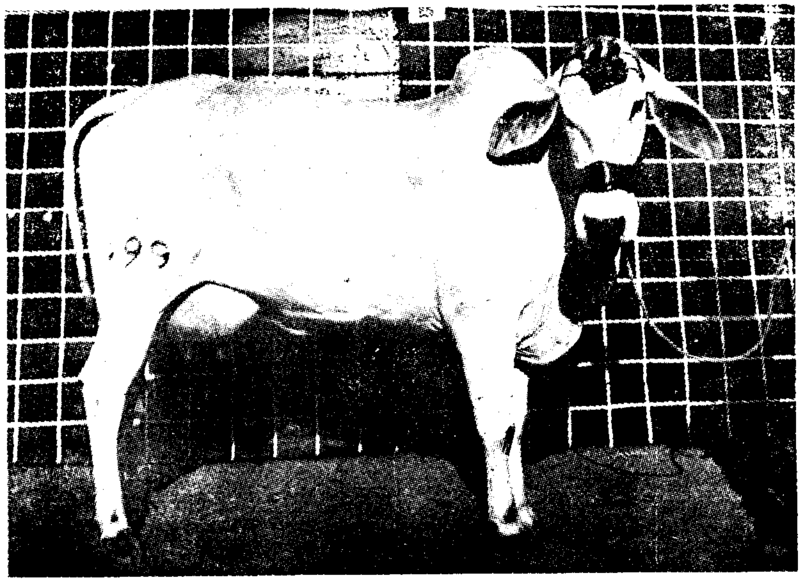

थरपारकर गाय

रूप में बराबर मिलता है। सच बात तो यह है कि देश की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुओं का और खास कर गोवंश का योगदान महत्वपूर्ण है

अगर ग्रामवासियों की सेहत की दृष्टि से देखें तो अधिकतर लोगों की खुराक में प्रोटीन का मुख्य स्रोत दूध ही है। यदि खेती की दृष्टि से देखें तो खेतों की खुदाई, जुताई, फसल की कटाई, गहाई और सिंचाई के लिए तथा कृषि-उत्पादकों को बाजार तक पहुंचाने में भी बैल का ही प्रयोग होता है। गरज यह ग्राम व्यवस्था का मूल आधार गाय और बैल दोनों के सहयोग पर टिका हुआ है।

अगर गहराई से विचार करें तो पता चलेगा कि भूमि की जरूरी खुराक भी पशुओं से मिलती है। पशु अपने गोबर की खाद से भूमि को उपजाऊ बनाते हैं। पशुओं के मलमूत्र से तथा कूड़े-पत्ती आदि से कम्पोस्ट खाद भी बनता है। जीवित अवस्थाओं में ही नहीं, बल्कि मरने के बाद भी पशु हमें लाभ पहुंचाते हैं। खाल और चमड़ा भी पशुओं से मिलता है। सच तो यह है कि हमारे देश में खेती की आधारशिला गाय और बैल है। आकड़ों से पता चलता है कि हमारा देश बहुत बड़ी मात्रा में खालें और चमड़ा विदेशों को भेजता है। इनकी बिक्री से काफी विदेशी मुद्रा भी कमाई जाती है। यही नहीं पशुओं के सींग, खुर और हड्डियां कारखानों में

अस्थि—चूर्ण तथा अन्य सामान बनाने के काम में लाई जाती हैं वैसे भी पशु-उद्योग बड़े पैमाने पर पूरे देश में फैले हुए हैं। कृषि कार्यों में तो पशु-श्रम के रूप में पशुधन का बड़ा महत्वपूर्ण योगदान है। आज भी ट्रैक्टर कितने किसानों के पास है? अन्य मशीनों जैसे थ्रेशर आदि की चर्चा करना ही व्यर्थ है।

नस्ल सुधार

मुख्य सवाल यह है कि पशुधन का विकास कैसे किया जाए? इस बारे में पचासों साल पहले गांधी जी ने स्पष्ट शब्दों में लिखा था—"गायों की नस्ल को सुधारने का काम जितना ही महत्व का है उतना ही मुश्किल है। परन्तु देश में बड़ी संख्याओं में पिंजरापोल और गौशालाएं हैं। वे अपनी शक्ति और साधन इसमें लगाएं, तो शुभ आरम्भ हो। कसाई की छुरी से थोड़े से ढोरों को बचाने के बनिस्वत करोड़ों पशुओं की सन्तान को सुधारना गायों के नाश को रोकने का अधिक अच्छा उपाय है।"

पशुओं की नस्ल सुधार के काम को यदि अमली जामा पहनाना है, तो इसे व्यवस्थित ढंग पर करना होगा। पहला काम खेती के योग्य अच्छे बैलों की उपलब्धि कराना, और दूध की दृष्टि से अच्छी गायों को तैयार करना होना चाहिए। दूसरा काम है कि पशुओं के लिए अच्छा चारा मुहैया करना। तीसरा काम पशुओं के रख-रखाव की उचित व्यवस्था करना तथा उनके स्वास्थ्य की देखभाल, पशुरोगों की चिकित्सा का प्रबन्ध आदि की ओर समुचित ध्यान देना होना चाहिए। फिर सबसे जरूरी काम यह है कि दूध और दूध से बने पदार्थों को वैज्ञानिक ढंग से तैयार करके सुरक्षित रखना और उनकी बिक्री की सुचारू रूप से ऐसी व्यवस्था करना जो लाभप्रद साबित हो सके। अगर यह काम ढंग से किए जाएं, तो इनकी बदोलत ग्रामों की कायापलट हो सकती है। खेद है कि आजादी के हासिल होने के तीस साल बाद भी इन क्षेत्रों में जो काम अब तक हुआ है, वह अपर्याप्त है। ज्यादातर लोग औद्योगीकरण के पीछे दौड़े हैं, और ग्रामीण व्यवस्था की ओर उपेक्षा का दृष्टिकोण रखा है। नतीजा यह है कि नगरों और महानगरों में विलासता के उपकरण बढ़े हैं। ऊंची-ऊंची इमारतें खड़ी हैं, उधर ग्रामों में गरीबी दिन पर दिन घर करती गई है।

लेकिन खुशी की बात है कि अब फिर से गांधीवाद की ओर जनता सरकार की अभिरूचि बढ़ रही है और गांधीवादी सिद्धांतों पर निष्ठावान लोग चलने का प्रयत्न कर रहे हैं।

इधर हाल के वर्षों में कृषि वैज्ञानिकों ने भी खेती के धंधे की ओर ध्यान दिया है। पशु-प्रजनन के कार्यक्रम द्वारा नस्ल सुधार के कार्य को आगे बढ़ाया गया है। हमारे देश के पशुओं की नस्लों के बारे में जानकारी हासिल करने का काम सन् 1929 के लगभग शुरू किया गया था। तब यह पाया गया था कि 26 नस्लों की गाय और 7 नस्लों की भैंसे अधिक महत्वपूर्ण हैं। यहां एक बात का उल्लेख करना जरूरी है। भैंस की कई अच्छी नस्लें हमारे देश में पाई जाती हैं, लेकिन कुछ मालदार किसान ही भैंस और बैल दोनो पाल सकते हैं। ऐसे किसान कितने हैं जो दूध के लिए भैंस और खेती के काम के लिए बैल पाल सकें?

अतः हमारे देश की मूल समस्या का समाधान गौवंश की उन्नति है। तथ्य यह है कि पशु-प्रजजन कार्यक्रम के दायरे में भैंस अभी तक प्रवेश नहीं पा सकी है। हां, भेड़ के विकास का काम जारी है। वैसे तो भेड़-विकास बहुत जमाने से हमारे देश में चालू है। अच्छी किस्म की बकरी भी हमारे देश में पाई जाती हैं, लेकिन वैज्ञानिकों का ध्यान इधर अपेक्षाकृत कम गया है।

नई नस्ल-कर्णस्विस

अनुभव से यह साबित हुआ है कि दूध के उत्पादन की दृष्टि से भारतीय पशु विदेशी नस्ल की तुलना में बहुत पीछे हैं। लिहाजा विदेशों से अच्छी नस्ल के पशु मंगाकर देशी नस्लों के सुधार का काम कुछ समय से शुरू किया गया है। अब तक के प्रयोगों से सबसे अधिक उल्लेखनीय, प्रगति राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान करनाल में हुई है, जहां पर साहीवाल, लालसिंधी गायों और ब्राउन स्विस नस्ल के साड़ों के बीच संकरण के बाद एक नई नस्ल तैयार की गई है, जिसका नाम "कर्ण स्विस" रखा गया है। इस नस्ल की गायों ने प्रतिदिन 43 कि० ग्रा० दूध देकर एक नया रिकार्ड स्थापित किया है। इसी तरह जरसी तथा हौल्सटीन फ्रीजि नस्ल के पशुओं का भारतीय देशी पशुओं के साथ संकरण करके नई नस्लें तैयार की गई हैं। इन नई नस्ल की गायों में अधिक दूध देने की क्षमता और वातावरण के अनुकूल अपने को ढालने की शक्ति विकसित हुई है। लेकिन अभी तक पशु-प्रजनन कार्यक्रम की उपलब्धियों को गांव-गांव तक पहुंचाने और पशु-पालकों को नई नस्ल के जानवर मुहैया कराने के लिए कोई खास कदम नहीं उठाए गए हैं।

पशु-प्रजनन कार्यक्रम के अलावा पशुओं के विकास में सबसे बड़ी कठिनाई चारा उपलब्ध कराने की है। एक वैज्ञानिक अध्ययन से पता चला है कि दूध-उत्पादन पर आने वाली लागत का 37 से 71% भाग केवल पशुओं के आहार पर खर्च होता है। पशु-आहार की उचित पूर्ति के लिए चारे-दाने के नवीनतम स्रोत खोजे जा रहे हैं। भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, इज्जतनगर में इस क्षेत्र में अच्छा काम हुआ है। मसलन यह पता लगा कि आम और जामुन की गुठलियां, पंवार और इमली के बीज, बबूल की फलियां आदि अनेक ऐसी वस्तुएं हैं, जिनमें प्रोटीन की मात्रा बहुत होती है और इन्हें पशुओं के आहार में शामिल किया जा सकता है। लेकिन यह सब खोज अभी प्रयोगशाला से बाहर निकलकर पशु-पालकों तक नहीं पहुंच सकी है।

गायों के रख-रखाव का सवाल इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि यदि पोषण में कमी रह जाए, तो गायों से अच्छी मात्रा

[शेष पृष्ठ 26 पर]

ग्रामीण विकास में युवकों का योगदान

आई. जे. नायडू, सचिव, ग्रामीण विकास,

कृषि एवं सिंचाई मंत्रालय ★

> छात्र स्वैच्छिक अनुशासन की कला सीखकर राष्ट्र का विभिन्न क्षेत्रों में नेतृत्व कर सकते हैं। वे यदि प्रति-दिन नहीं तो प्रति-सप्ताह कुछ समय निकालकर अपने स्कूलों या कालेजों के निकट एक या अधिक गांवों में सेवा के लिए जा सकते हैं और छुट्टियों के दौरान तो रोजाना कुछ समय राष्ट्रीय सेवा में लगा सकते हैं।······**महात्मा गांधी**

किसी देश के युवक उसकी सबसे बड़ी सम्पत्ति होते हैं। इस युवा शक्ति की सहायता से सामाजिक—आर्थिक क्षेत्रों में सफलता प्राप्त की जा सकती है। दृढ़निश्चयी और प्रबुद्ध युवा वर्ग को कुछ भी प्राप्त करना कठिन या असंभव नहीं है।

शिक्षाविदों, नियोजकों और प्रशासकों में इस बात पर एक राय है कि हमारे जैसे देश में विश्वविद्यालय और उच्च शिक्षा की अन्य संस्थाओं को चाहिए कि वे सांस्कृतिक विरासत को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाने की मात्र एजेंसियों के रूप में ही कार्य नहीं करें बल्कि उन्हें नए विचारों, नई वैज्ञानिक जानकारी, कृषि और औद्योगिक उत्पादन के बेहतर तरीकों आदि को फैलाने के केन्द्रों के रूप में काम करना चाहिए। सांस्कृतिक शुद्धता और व्यक्तिगत विकास की प्रक्रिया के रूप में शिक्षा की परम्परागत धारणा को अब पर्याप्त नहीं समझा जाता। कुछ लोगों का यह दृढ़ विचार है कि भारत जैसे विकासशील देश में विश्वविद्यालयों को एक ओर समाज की सामाजिक-आर्थिक आवश्यकताओं तथा दूसरी ओर बढ़ते हुए युवकों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं के बीच सार्थक सम्पर्क स्थापित करना है। प्रमुख विश्वविद्यालयों ने इस बात को महसूस किया था कि कक्षाओं में पढ़ा देना मात्र पर्याप्त नहीं है और विश्वविद्यालयों को अपनी चार-दिवारी के बाहर भी उच्च शिक्षा का विस्तार करना चाहिए ताकि समाज की गंभीर कमियों और असमानताओं को दूर किया जा सके। विकास कार्यों में विश्वविद्यालयों की सक्रियता के पिछली एक शताब्दी में कई उदाहरण मिलते हैं। प्रबुद्ध व्यक्तियों ने लोगों के पड़ोस में रहना शुरू किया ताकि वे उनको समझने और उनकी दशा को सुधारने के लिए अपने आप को उनके साथ मिला सकें।

हम इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर सकते कि देश में प्रमुख विश्वविद्यालय ब्रिटिश सत्ता के दौरान लगभग पूर्वकालिक ब्रिटिश विश्वविद्यालयों के अनुरूप स्थापित किए गए थे। उस समय शिक्षा के दो बड़े उद्देश्य थे। देश में सांस्कृतिक रूप से ऐसे लोग पैदा करना जिन पर स्वदेशी आवश्यकताओं के दबाव का प्रभाव न हो सके और (2) ऐसे व्यक्तियों का दबाव तैयार करना जिन्हें जन साधारण का शोषण करने और रोजमर्रा के औपनिवेशिक प्रशासन को चलाने के लिए प्रयुक्त किया जा सके। परिणामस्वरूप भारत में विश्वविद्यालयों ने पृथकत्व का वातावरण तैयार किया जिसे औपनिवेशिक शासकों के निजी हितों द्वारा बढ़ाया गया।

स्वतंत्रता-पूर्व समय के दौरान सामान्य रूप से सामाजिक विकास और विशेषरूप से ग्रामीण पुनर्निर्माण मुख्यतः सुप्रसिद्ध नेताओं द्वारा स्थापित स्वैच्छिक संगठनों का क्षेत्र था। इन सभी संगठनों ने इस बात पर जोर दिया कि युवा वर्ग दोनों छात्रों और गैर-छात्रों का ग्रामीण उद्धार में एक भूमिका और दायित्व है। महात्मा गांधी ने युवकों को गांवों में जाने का आह्वान किया था। परन्तु उनके स्वामियों अथवा उपकारियों के रूप में नहीं बल्कि विनम्र सेवकों के रूप में जाने के लिए कहा था। वे चाहते थे कि छात्रों, जिनमें विश्वविद्यालय और कालेजों के छात्र भी शामिल थे, को चाहिए कि वे पढ़ने के साथ-साथ गांवों का काम भी करें। ग्राम विकास का कार्यक्रम रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा श्री निकेतन के इर्दगिर्द गांवों में शुरू किया गया था जिसका उद्देश्य ग्रामीण समाज का सम्पूर्ण विकास और गांवों के कामों में छात्रों को प्रशिक्षित करना था। इसके लिए उन्होंने श्रीनिकेतन में ग्रामोन्मुख कई संस्थाएं स्थापित की थीं। स्वतंत्रता-पूर्व के दिनों में शुरू की गई इस दृष्टिकोण की ग्रामीण विकास योजनाओं के अनेक उदाहरण हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर दिनों में यह महसूस किया जाने लगा कि विश्वविद्यालय का युवकों को पढ़ाने और अनुसंधान कराने के कामों के अतिरिक्त उससे बड़ा समाज के प्रति भी एक दायित्व है। दायित्व की यह भावना अन्य बातों के अतिरिक्त इस तथ्य से पैदा हुई कि विश्वविद्यालयों के लिए अधिकांश पूंजी जनता कोष से आती है जिसमें सभी कर-दाता, ग्रामीण और शहरी, अमीर-गरीब योगदान देते हैं। इस दायित्व को निभाने का सर्वोत्तम

तरीका यह है कि लोगों के जीवन में संबद्धता की भावना पैदा की जाए और विश्वविद्यालयों के ज्ञान को लोगों की समस्याओं के समाधान के काम में लगाया जाए।

स्वतन्त्र्योत्तर समय में हमारा देश सामाजिक और आर्थिक विकास के उद्देश्यों का अनुसरण करता रहा है। इस सभी विकास का मुख्य उद्देश्य नियोजित कार्य है। ऐसे काम में विश्वविद्यालय की सम्बद्धता समाज के लिए सार्थक सिद्ध होगी। इससे विश्वविद्यालय से आने वाले शिक्षित युवकों के लिए रोजगार के लिए रोजगार के नए अवसर भी पैदा होंगे। अपने आप को विकास से यथार्थ रूप से सम्बद्ध करने से विश्वविद्यालय तिगुना काम करेंगे। यथा औपचारिक और अनौपचारिक तरीकों से ज्ञान का प्रसार, अनुसंधान कार्यक्रमों, जो विकास नियोजन की आवश्यकताओं को पूरा करते हैं, का आयोजन और समाज में सामाजिक आर्थिक स्थिति का सुधार तथा समस्याओं का समाधान।

ऐसा विश्वविद्यालय शिक्षित लोगों के ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर प्रस्थान को रोक कर, ग्रामीण आवश्यकताओं के अनुरूप पाठ्यक्रमों की व्यवस्था करके, अनौपचारिक शिक्षा के कार्यक्रमों को सशक्त करके ग्रामीण विकास में पर्याप्त योगदान कर सकता है।

ग्रामीण विकास हमारी पंच-वर्षीय योजनाओं का अभिन्न अंग रहा है। फिर चाहे इस पर अधिक जोर नहीं दिया जाता रहा है। पहली पंचवर्षीय योजना में सघन क्षेत्र विकास के महत्व पर जोर दिया गया। इसमें कृषि उत्पादन की योजनाओं पर अधिक जोर दिया गया और कृषि विकास को ग्रामीण विकास कार्यक्रम के महत्वपूर्ण अंग के रूप में समझा गया। योजना में सामुदायिक विकास को एक प्रणाली के रूप और ग्रामीण विस्तार को एक एजेंसी के रूप में बताया गया है जिनके माध्यम से गांवों के सामाजिक और आर्थिक जीवन के रूपांतरण की प्रक्रिया शुरू की गई। सामुदायिक विकास कार्यक्रम का मूल उद्देश्य विशेष क्षेत्र के भौतिक और मानवीय स्रोतों का विकास करना और इस प्रकार ग्रामीण समाज के जीवन स्तर को ऊंचा उठाना था। सामुदायिक विकास कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं को कार्यान्वित करने की प्रक्रिया में थोड़ा-वहुत परिवर्तन जरूर हुआ है परन्तु इस दृष्टिकोण में परिवर्तन नहीं हुआ है।

दूसरी योजना में इस बात पर बल दिया गया कि सामुदायिक परियोजनाओं और राष्ट्रीय विस्तार सेवा का मुख्य उद्देश्य लोगों के मानसिक दृष्टिकोण में परिवर्तन करना, उनमें उच्च स्तरों की प्राप्ति के लिए एक लालसा पैदा करना था।

तीसरी योजना में यह महसूस किया गया कि ग्रामीण विस्तार की धारणा बढ़कर पंचायती राज की धारणा बन गई और पंचायती राज संस्थाओं के संचालन और विकास के कार्य को योजना में प्रमुखता दी गई।

चौथी योजना में ग्रामीण विकास को एक नया रूप दिया गया और जिला प्रशासन में विशेष महत्व का परिवर्तन किया गया। अनेक राज्यों में खंड संगठन ही विकास कार्यक्रमों को कर्यान्वित करने की एकमात्र क्षेत्रीय एजेंसी थी। विकास प्रयोगों में स्थानीय लोगों का भी उल्लेखनीय योगदान रहा है। चौथी योजना ने भी ग्रामीण क्षेत्रों में विकास को एक नई दिशा प्रदान की। सामाजिक न्याय के साथ विकास ग्रामीण विकास में हमारे प्रयासों का अभिन्न अंग बन गया। यह महसूस किया गया कि अधिक उत्पादन के लिए मात्र तकनीकी के हस्तांतरण से सम्पूर्ण ग्रामीण समाज को उसके लाभों का समान वितरण नहीं किया जा सकता क्योंकि उत्पादन में, वृद्धि का लाभ गांवों के गरीब लोगों की तुलना में अधिक साधनयुक्त लोगों को प्राप्त हो रहा था। इससे सामाजिक न्याय के साथ विकास के कार्यक्रम तैयार होने लगे। ये थे : लघु कृषक विकास एजेंसियां, सीमांत और और कृषि मजदूर योजनाएं, आदिवासी विकास एजसियां, कमान क्षेत्र विकास, सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम आदि। इनके पीछे दृष्टिकोण यह था कि पिछड़े क्षेत्रों का विकास करने के साथ-साथ गांवों के गरीब लोगों का पता लगाना और उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सक्रिय प्रयास करना था।

पांचवीं योजना में ग्रामीण विकास की दोहरी नीति यथा गांवों के गरीब लोगों की आर्थिकस्थिति का सुधार और क्षेत्र विशेष की कुल मिलाकर अर्थव्यवस्था के विकास के लिए पूंजी निवेश को उचित महत्व दिया गया। उद्देश्य यह रहे हैं कि सामाजिक न्याय के साथ विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बेरोजगारी, अल्प-रोजगारी और गरीबी की समस्याओं पर आक्रमण किया जाए। हमारी योजना प्रक्रिया में यह स्वीकार किया गया है कि ग्रामीण विकास में कृषि विकास भी शामिल होना चाहिए ताकि फसल उत्पादन के साथ-साथ सभी सम्बद्ध कार्यक्रम की गतिविधियों को स्वीकारा जाए। समन्वित विकास में सभी सम्बद्ध कार्यक्रम शामिल होने चाहिएं ताकि उनका कृषि उत्पादन वढ़ाने और छोटे किसानों तथा कृषि मजदूरों में बेरोजगारी और अल्परोजगारी को कम करने पर प्रभाव पड़ सके।

आज ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के काम ने और अधिक विस्तृत रूप धारण कर लिया है। कमजोर वर्गों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए साधन बढ़ाने के लिए सुव्यवस्थित रूप से काम किया जा रहा है। यह संभवतः पहली बार है कि चुने हुए क्षेत्रों और कमजोर वर्गों की आवश्यकताओं में वृद्धि को संतुलित करने के लिए प्रयास किया जा रहा है।

हमारे देश में आयोजन के आरंभ से ग्रामीण विकास सहित राष्ट्रीय विकास के सभी कार्यक्रमों को पूरा करने में लोगों की भागीदारी पर अधिक बल दिया गया है। विभिन्न वर्गों के लोगों को विकास कार्यक्रमों में शामिल करने के लिए विशिष्ट योजनाएं बनाई गई हैं। 1955-56 वर्ष में भारत सरकार ने विश्व-

विद्यालय और कालेज अध्यापकों तथा छात्रों ने आयोजन मंचों की एक योजना शुरु की। इसका उद्देश्य आयोजन प्रक्रिया में विश्वविद्यालय और कालेजों में उपलब्ध साधनों का लाभ उठाना और छात्रों एवं अध्यापकों में योजना की जानकारी को प्रोत्साहित करना है। आरंभ में ये योजना मंच अध्ययन दलों के रूप में काम करते थे परन्तु उनकी गतिविधियों की सूची बढ़ती गई और अन्ततः अन्य बातों के साथ-साथ उनमें निम्नलिखित बातें शामिल की गई: आम जनता में योजना के विभिन्न पहलुओं के बारे में सूचना का प्रसार करना ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में बचत अभियान चलाना, ग्राम सर्वेक्षण आयोजित करना, गांवों में कुओं, सड़कों और सार्वजनिक भवनों के निर्माण जैसी गतिविधियों द्वारा लोगों को समाज सेवा प्रदान करना, ग्रामीण क्षेत्रों में समय-समय पर स्वास्थ्य शिविरों, खाद्य प्रदर्शनियों और परिवार नियोजन अभियानों का आयोजन तथा प्राकृतिक आपदाओं यथा बाढ़, सूखा, अकाल आदि पड़ने पर सहायता करनी आदि।

इन योजनाओं का उद्देश्य छात्र और अध्यापक वर्ग को निःसंदेह विकास योजनाओं में शामिल करना और उन्हें लोगों के अधिक निकट लाना है, परन्तु ये योजनाएं विश्वविद्यालयों की उच्चतर शिक्षा कार्यों संबंधी नीति में किसी परिवर्तन के कारण नहीं थी। राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964-66) ने विश्वविद्यालयों के कार्यों को दुबारा निश्चित करने के लिए एक महत्वपूर्ण प्रयास किया था। इसने विश्वविद्यालयों के परम्परागत कार्यों में तीन महत्वपूर्ण कार्य और जोड़ दिए। ये थे छात्रों द्वारा समाज सेवा का आयोजन, विश्वविद्यालय शिक्षा को नया रूप देना और प्रौढ़ शिक्षा तथा पत्राचार पाठ्यक्रम के विकास कार्यक्रम।

आयोग की सिफारिशों के परिणाम स्वरूप भारत सरकार ने राष्ट्रीय सेवा योजना आरंभ की। इसके संचालन के सात वर्षों के दौरान योजना से अनेक ऐसे वालंटियरों ओर अध्यापकों के दृष्टिकोण में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है जिन्होंने नियमित कार्यक्रमों और "अकाल के विरुद्ध युवक" और "गर्द एवं बिमारी के विरूद्ध युवक" जैसे विशेष शिविर कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से भाग लिया इन शिविरों में गतिविधियां अधिकांश रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में चलाई गई थीं। ऐसी परियोजनाओं में छात्रों और अध्यापकों की भागीदारी से शिक्षण और शिक्षा में काफी सुधार होता है क्योंकि छात्र और अध्यापकों को सामाजिक वास्तविकताओं को निकट से जानने का अवसर मिलता है।

हमारे जैसे विशाल देश, जिसमें 5½ लाख से अधिक गांव हैं, राष्ट्र-निर्माण की गतिविधियों में व्यस्त छात्र दलों या स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं का अधिकांश गरीब और कमजोर लोगों पर अपेक्षित प्रभाव नहीं पड़ा। इस बात को ध्यान में रखते हुए इन आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए इस समय नीतियों और पूंजी निवेश को नया रूप देने की दिशा में सोचा जा रहा है। बेरोजगारी और अल्प-रोजगारी की समस्या के समाधान के विशाल कार्यक्रम को अंतिम रूप दिया जा रहा है। ग्रामीण पुनर्निर्माण के इस जटिल काम में सरकार को समाज के सभी वर्गों के सहयोग की आवश्यकता है। स्वैच्छिक संगठनों, औद्योगिक घरानों और विशेष रूप से छात्र समुदाय को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी। ★

खेती का आधार.................. [पृष्ठ 23 का शेषांश]

में दूध नहीं मिल सकता। इसके अलावा कुपोषण के कारण अनेक रोग भी हो सकते हैं। खेद है, पशुओं की चिकित्सा की व्यवस्था गांवों में अभी तक नहीं पहुंच पाई है। यही कारण है कि ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था अभी तक पनप नहीं सकी। यही नहीं दूध और दूध के उत्पादकों को वैज्ञानिक ढंग पर तैयार करने के उपयुक्त उपकरण भी गांव तक नहीं पहुंच सके हैं। मसलन गुजरात के जिला खेड़ा में सहकारी आधार पर जैसा प्रयोग जारी है, वैसा अभी तक देश के अन्य भागों में कहां है? सच बात तो यह है कि ग्रामों की बिना सुचारू व्यवस्था किए हम कभी आत्म निर्भर नहीं बन सकते। ग्राम विकास की योजनाओं की सफलता का आधार गोवंश की उन्नति और गोपालन से संबंधित धंधों पर निर्भर है।

पशु—प्रजनन कार्यक्रम पशु-स्वास्थ्य और पशुओं के आहार और दूध व दूध से बने पदार्थों की बिक्री आदि विषयों पर पूरा-पूरा ध्यान देने के बाद ही हम ग्रामों की खुशहाली का सपना साकार कर सकते हैं। अब तक जो कुछ इस दिशा में हुआ है, उसे संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। आवश्यकता इस बात की है कि विकास का प्रमुख केन्द्र ग्राम इकाई बने। ग्रामीण-जीवन को सुखद बनाने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है।

आमतौर पर किसी भी देश की उन्नति का मापदंड शहरों की समृद्धि पर नहीं, बल्कि ग्रामों की खुशहाली पर आधारित है। कारण, हमारे देश की 70% आबादी गांवों में रहती है। उसके रहन-सहन के स्तर को देखकर ही असलियत का पता चल सकता आज की दशा तो यह है कि शहरों की चमक-दमक दिन पर दिन बढ़ती जाती है, उधर गांव उपेक्षित रह कर अंधकार में हैं। सचाई तो यह है कि ग्रामों में शोषण आज भी जारी है। आज भी श्रम पर पूंजी पूरी तरह सवारी गांठे हुए है। ★

खुशहाली के लिए सिंचाई क्षमता में वृद्धि आवश्यक

पुराने ढंग से (परोहे) से सिंचाई करते हुए

ब्रजलाल उनियाल

सृष्टि के आरम्भ से ही पानी मनुष्य की सबसे बड़ी आवश्यकता रही है। प्राचीन साहित्य में तो पानी का एक नाम जीवन भी है। प्राचीन समय में और आज भी पानी, नदियां या भूगर्भीय पानी किसी भी रूप में देश की स्थायी सम्पदा है। पानी न केवल कृषि-सम्पदा बल्कि बिजली और यातायात का भी जबर्दस्त साधन है। हमारा देश बहुत भाग्यशाली है क्योंकि यहां लगभग 10,360 नदियां हैं जिनका पुष्कल जल भारत वसुन्धरा को सुजला, सुफला और और शस्य श्यामला बनाता है।

हमारा देश मुख्यत: खेतिहर देश है। यहां जमीन की सतह और भूगर्भीय पानी का सबसे मुख्य उपयोग खेती की सिंचाई के लिए होता है। वेदों और प्राचीन साहित्य में कुओं, नहरों, तालाबों और बांधों का उल्लेख है। यहां तक सिंचाई के साधनों के महत्व व शासन के दायित्व पर भी प्रकाश डाला गया है।

इसमें शक नहीं कि हमारी खेती बाड़ी में अभूतपूर्व प्रगति हुई है और आज हम न केवल आत्म निर्भर हैं बल्कि हमारे पास अनाज का पर्याप्त भंडार भी है। इसके कारणों में जहां नये बीज, उर्वरक व नयी तकनीकों का योगदान है वहां सिंचाई का भी भारी महत्व है। लेकिन बड़ी योजनाओं के साथ छोटी योजनाओं कुओं, तालाबों व नलकूपों के महत्व को कम नहीं आंका जा सकता। इनको गांवों की संरचना आधार में महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए।

कीमती पानी

वह बात बहुत कम लोग जानते होंगे कि सिंचाई के लिए इस्तेमाल किए जाने वाला पानी काफी कीमती पड़ता है। उद्योग धंधों में एक टन पानी से एक टन माल तैयार किया जा सकता है पर एक टन अनाज पैदा करने के लिए हजारों टन पानी चाहिए। यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि जितना पानी फसल को दिया जाता है उसके बहुत कम प्रतिशत से ही लाभ होता है। सिंचाई विशेषज्ञों के अनुसार भारत में 9 करोड़ 30 लाख एकड़ भूमि के लिए सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं। इनमें से 4 करोड़ 30 लाख एकड़ भूमि नहरों से और पांच करोड़ लघु सिंचाई साधनों से सींची जाती है।

सिंचाई के साधन

भारत में सिंचाई के प्रमुख साधन चार हैं—नहरें, तालाब, कुएं और अन्य साधन।

भारत में कुछ सिंचित क्षेत्र के अधिकांश भाग में नहरों से सिंचाई होती है। ये नहरें वर्षाकालीन, वर्ष भर चलने वाली व संचित जल यानी बांध बनाकर जल को इकट्ठा कर निकाली जाने वाली हैं।

भारत में कुओं का विशेष महत्व है और केवल कुएं ही सिंचाई के एक मात्र साधन हैं। कुएं अधिकतर किसान अपने ही खर्चे से या ऋण लेकर बनाते हैं। भारत में लगभग 25 लाख कुएं हैं जिनसे अनुमानत: 60 लाख हैक्टर भूमि की सिंचाई होती है। अब छोटी सिंचाई योजनाओं पर ज्यादा ध्यान दिया जाने लगा है।

नलकूप की योजना हमारे देश में 1933में बनाई गई थी। स्वतंत्रता से पहले भारत में केवल 1900 नलकूप थे। भारत में जब 'अधिक अन्न उपजाओ आंदोलन' चला तो 1955 के अंत तक 2300 नलकूप बनाए गए। इस समय तो अकेले उत्तर प्रदेश में ही लगभग सात हजार नलकूप हैं, जिनसे सात लाख हेक्टर भूमि की सिंचाई की जाती है।

तालाब बहुत प्राचीन काल से ही सिंचाई के महत्वपूर्ण साधन रहे हैं। हमारे देश में लगभग 40 हजार तालाब हैं जिनमें से 35 हजार तालाब अकेले

तमिलनाडु में हैं। वर्षा ऋतु में जो पानी तालाबों में इकट्ठा होता है उसी से सिंचाई होती है किन्तु वर्षा कम होने अथवा मिट्टी जम जाने से सिंचाई करने में कठिनाइयां आती हैं। यह दुख की बात है कि जमींदारी उन्मूलन के बाद तालाबों की सफाई पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया।

नदी घाटी प्रायोजनाएं

भारत की अर्थव्यवस्था में नदी घाटी प्रायोजनाओं का विशेष महत्व है। इनके उद्देश्यों में सिंचाई, बिजली, वन रोपण, बाढ़-नियंत्रण, मृदासंरक्षण, जल यातायात तथा पर्यटन-उद्योग हैं। इनके निर्माण में भारी पूंजी लगती है। इस पूंजी में कुछ विदेशी मुद्रा भी होती है। परन्तु इसका फल किसानों को तत्काल नहीं मिलता।

काफी समय बाद जब ये प्रायोजनाएं कार्यान्वित होती हैं तो खेती को व्यापक लाभ होता है। सघन खेती को बढ़ावा मिलता है। खेती की उपज बढ़ती है। बिजली से कल-कारखाने चलते हैं। रोजगार मिलता है। हमने इसका प्रत्यक्ष फल पंजाब में देख ही लिया और जगहों में भी भारी लाभ पहुंचा है।

समस्याएं

सर्वेक्षण से यह पता चला कि नदी घाटी योजनाओं के फलस्वरूप सिंचाई की जो क्षमता उत्पन्न की गई उसका प्राय: कम ही उपयोग हुआ है। इसके कारण हैं, सिंचाई की अधिक दर, खेतों तक पहुंचने वाली सिंचाई की नालियों का अभाव, सिंचाई विभाग की दोषयुक्त व्यवस्था तथा किसान के पास अन्य पूरक साधनों का अभाव। इन दोषों का दूर किया जाना नितान्त आवश्यक है। इन योजनाओं में केवल सिंचाई व बिजली पर ही ध्यान दिया गया है। अभी तक नदी संबंधी अन्य प्राकृतिक साधनों का अधिक लाभप्रद उपयोग नहीं हो पाया। इन उपयोगों में मृदासंरक्षण, बाढ़-नियंत्रण, जल निकास व यातायात उल्लेखनीय हैं।

कुछ विशेषज्ञों की तो यह निश्चित राय है कि भारत में पिछले 15 वर्षों में यदि बड़ी योजनाओं की जगह छोटी शीघ्र फलदायी योजनाओं पर जोर दिया जाता तो भारतीय खेतों की प्रगति और अधिक होती। कुछ हद तक यह बात सत्य भी है।

सिंचाई से भरपूर लाभ

हमारे देश में सिंचाई का पूरा लाभ नहीं मिल पाता। इस बात का अनुमान इस से लग सकता है कि प्रगतिशील देशों में सिंचित फसलों से कितनी अधिक उपज मिलती है। विभिन्न देशों में सिंचाई के साधनों का उपयोग तथा उपज नीचे दी गई हैं—

सिंचाई से भरपूर लाभ न मिलने के कारण हैं: बीच में बेकार पानी से पूरा लाभ न मिलना, पानी का क्षारीय या लवणीय होना, जल लग्नता आदि। सिर्फ सिंचाई से पैदावार बढ़ती है पर उतनी नहीं जब तक कि सभी चीजें मुहैया न हों। एक अनुमान के अनुसार खेती में पैदावार बढ़ाए विभिन्न साधनों का योगदान इस प्रकार है—सिंचाई से 27 प्रतिशत, उर्वरक से 41 प्रतिशत, सुधेर बीज से 13 प्रतिशत, भूसुधार व तकनीकी ज्ञान से 9 प्रतिशत व दुफसली खेती से 10 प्रतिशत।

सिंचाई फसलों की प्रति हैक्टर औसत उपज क्विंटल में (1965-66)

देश	गेहूं	मक्का	धान	गन्ना	उर्वरक औसत
भारत	77.3	9.9	16.1	48.4	4.43
जापान	24.5	23.3	51.5	—	304.39
ताइवान	21.0	21.0	36.5	69.4	257.07
इजरायल	22.3	34.9	—	—	93.32
संयुक्तराज्य अमेरिका	17.7	34.3	45.9	86.4	54.49
नीदरलैंड	47.1	42.6	—	—	—

अच्छी सिंचाई से लहलहाती ज्वार की खेती

रिसाव को रोकना

सिंचाई की क्षमता बढ़ाने के लिए सिंचाई की व्यवस्था में सुधार करना अनिवार्य है। इसके लिए ईंटों, सीमेंट के प्लास्टर, बाईटुमिनाइज्ड सामग्री, प्लास्टिक, चिकनी मिट्टी आदि पदार्थों से नालियों को मजबूत बनाया जाए ताकि पानी रिसने न पाए।

कृषि क्रियाएं

कुछ कृषि क्रियाएं ऐसी हैं जिन्हें अपनाकर सिंचाई के पानी में किफायत की जा सकती है और उसका पूरा लाभ उठाया जा सकता है। ये हैं: रोपाई के लिए तरी की ऐसी व्यवस्था की जाए जिससे पौधे और जड़ का विकास हो सके। इससे गर्मियों के दिनों में वाष्पीकरण तेजी से नहीं होता। इससे फसल भी कम समय में उगती है। उर्वरक देने से सूखे से बचाव हो सकता है और सिंचाई का भी काफी लाभ उठाया जा सकता है।

भारतीय कृषि अनुसंधानशाला में भारद्वाज और राइट ने गेहूं की बोनी किस्मों पर परीक्षण किया। उन्होंने अलग अलग समय पर गेहूं की फसल में सिंचाई की और परिणामों की जांच की। ये परिणाम निम्नलिखित हैं :—

गेहूं की उपज (क्विटल फी हैक्टर)

	रोपाई के 14 दिन बाद	शीर्ष जड़ें विकसित होने के समय सिंचाई	जड़ आने के 21 दिन बाद
भारत कृ०अ०शा० दिल्ली			
एस० 64*	*49.0	*49.9	*46.6
एस० 227	51.7	53.5	52.21
तनगर			
एस० 64	54.4	63.0	48.9
एस० 227	53.3	64.1	47.8
पंवार खेड़ा			
एस० 64	28.8	26.2	16.7
एस० 227	31.5	34.8	22.3

इस सारणी से पता चलता है कि ठीक समय पर पानी देने से पूरा-पूरा लाभ उठाया जा सकता है। तीनों केन्द्रों में बौनी किस्मों में ठीक समय पानी देने से 21 दिन बाद पानी देने की अपेक्षा सिंचाई से 25 प्रतिशत अधिक लाभ हुआ। एक ओर प्रयोग से मालूम हुआ कि छः सिंचाइयों से गेहूं की प्रति हैक्टर उपज 48.6 क्विटल मिली जबकि चार सिंचाइयों से 45.69 क्विटल उपज मिली।

नयी अपेक्षाएं

इसमें संदेह नहीं कि पहले बड़ी बड़ी नदी-घाटी योजनाओं पर ध्यान दिया जाता रहा, और किसान उनसे लाभान्वित तो हुए पर छोटे किसान उतना लाभ नहीं उठा सके। सिंचाई की क्षमता तो काफी मात्रा में बढ़ी है पर योजना आयोग के कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन ने जो सर्वेक्षण किए उनसे मालूम होता है कि सन् 1959-60 के खरीफ मौसम में केवल 54 प्रतिशत सिंचाई क्षमता का तथा रबी मौसस में केवल 30 प्रतिशत सिंचाई क्षमता का उपयोग हुआ। एक प्रमुख कारण सिंचाई दरों का महंगा होना भी है।

हमें प्रयोजनाओं के तैयार करने के कार्य को अधिक महत्व देना होगा। उपलब्ध विशेषज्ञों की सेवाएं लेनी होंगी ताकि लागत अनुमान को सुधारने का प्रयत्न किया जाए।

रख रखाव और संचालन हमारे विकास के साथ तालमेल नहीं रख रहे हैं। खेती में नए बीज, उर्वरक आदि के प्रयोग में जो क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए हैं उनके संदर्भ में सिंचाई की सुविधाएं जुटाई जाएं लेकिन साथ ही छोटे किसानों का ध्यान रखा जाए।

जल व्यवस्था संबंधी विभिन्न तकनीकों पर खेती व इंजीनियरिंग संस्थाओं में अब तालमेल बैठाया जा रहा है। इस काम में छात्रों को प्रशिक्षित किया जा रहा है। आशा है कि उपयुक्त कार्यक्रम से मिट्टी व जल व्यवस्था संबंधी कुछ उन महत्वपूर्ण समस्याओं का समाधान हो सकेगा जिनके कारण पैदावार नहीं बढ़ पा रही है।

बारानी क्षेत्रों में भूमि व जल संरक्षण के लिए अच्छी तकनीकों के बारे में भी कार्यक्रम बनाए गए हैं और भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के अन्तर्गत संस्था इस दिशा में महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं। वर्षा के पानी के अधिकतम उपयोग पर शोध जारी है। ★

> जितने से जीवन धारण हो उतने पर ही इन्सान का अधिकार है।
> जो इससे अधिक चाहता है, वह चोर है और दंड का अधिकारी है।
> —श्रीमद्भागवत

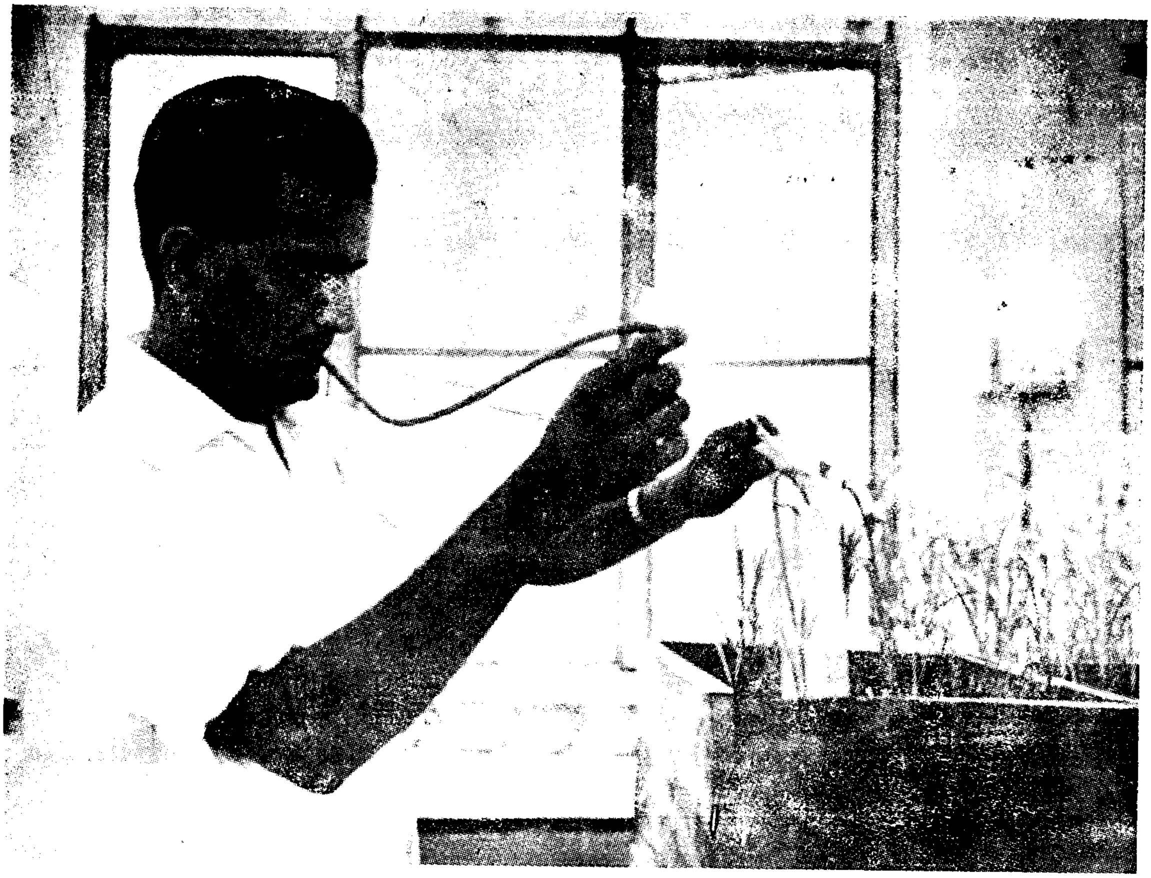

विज्ञान और टेक्नालोजी गांवों की ओर ★ बसन्त कुमार

विगत कुछ वर्षों के दोरान हमारे देश के वैज्ञानिकों ने विज्ञान तथा टेक्नालोजी के क्षेत्र में अभूतपूर्व व असाधारण सफलताएं प्राप्त की हैं। राजस्थान में सफल भूमिगत आणविक विस्फोट, आर्यभट्ट उपग्रह का पृथ्वी की कक्षा में प्रक्षेपण, ग्रामीण क्षेत्रों में टेलीविज़न कार्यक्रमों के प्रसंग हेतु भूउपग्रह का इस्तेमाल, सागर सम्राट् द्वारा पश्चिम तटवर्ती समुद्र में तेल की खोज, देश में आणविक बिजली घरों की स्थापना, खेती में उर्वरक की जरुरतों को पूरा करने के लिए उर्वरक कारखानों की श्रृंखला, पन बिजली तथा सिंचाई साधनों में तेजी से प्रगति इत्यादि ऐसी अनेक उपलब्धियां हैं जिनके आधार पर हम भलो-भांति कह सकते हैं कि हमारा देश भी देर-सवेर विश्व में प्रगतिशील समझे जाने वाले संयुक्त राष्ट्र अमेरिका व पश्चिमी विकसित राष्ट्रों की श्रृंखला में अपना स्थान बना ही लेगा।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी जनशक्ति के हिसाब से आज हमारा देश काफी सशक्त है। विश्व में भारत का तीसरा स्थान है। आज़ादी से पहले हमारे यहां इने-गिने तकनीकी संस्थान थे। इन संस्थानों में शिक्षा ग्रहण करने वाले अधिकतर विद्यार्थी सम्पन्न परिवारों मुख्यतः शहरी क्षेत्रों के होते थे। देश में औद्योगिक उत्पादन के नाम पर लोहे के चुनीदा सामान, खिलौने, मामूली कल पुर्जे, घटिया कपड़ा, चमड़े का सामान इत्यादि वस्तुएं तैयार की जाती थीं। सुई से लेकर मोटर, रेल, हवाई जहाज़ों तथा विभिन्न प्रकार की औद्योगिक वस्तुओं के लिए विदेशों से आयात पर निर्भर रहना पड़ता था। इससे देश का काफी धन विदेशों को चला जाता था।

किन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् स्थिति बदली। 1951 में सरकारी निर्णयों के अनुसार 15 से 25 वर्षों के मैट्रिक तथा शिक्षित युवक-युवतियों के तकनीकी प्रशिक्षण के लिए समूचे देश में तकनीकी प्रशिक्षण संस्थान खोलना आरंभ किया गया। इस समय देश में तकनीकी प्रशिक्षण देने वाले ऐसे 354 संस्थान हैं। इन संस्थानों में विभिन्न प्रकार के 54 व्यवसायों का प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रति वर्ष लगभग डेढ़ लाख से भी अधिक कुशल कारीगर तैयार किये जाते हैं। इसमें इंजीनियरी, इलैक्ट्रानिक्स, रेडियो,

टेलीविजन, प्रिंटिंग प्रेस. सर्वेक्षण प्रशिक्षण मुख्य हैं।

उच्च तकनीकी शिक्षा

उच्च तकनीकी शिक्षण संस्थानों के रूप में बम्बई, मद्रास, खड़गपुर, दिल्ली और कानपुर में राष्ट्रीय महत्व की उच्च तकनीकी संस्थाएं आजादी के बाद स्थापित की गई हैं। इनमें प्रतिवर्ष पूर्व स्नातक कक्षाओं में लगभग 1250 विद्यार्थी और स्नाकोत्तर कक्षाओं में 1200 से 1500 तक विद्यार्थी प्रवेश पाते हैं। इसके अतिरिक्त प्रादेशिक इंजीनीयरी कालेजों व अनेक पालिटैकनिकों की भी स्थापना की गई है।

1957 में इंजीनियरिंग डिग्री स्तर की 137 और डिप्लोमा की 284 संस्थाएं थीं जबकि 1951 में उनकी संख्या क्रमशः 53 और 89 थी। 1971 के इन संस्थानों की कुल प्रवेश क्षमता 50 हज़ार छात्रों की थी। परन्तु इतना सब होते हुए भी देश के ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति में सीधे कुछ सुधार नहीं हो सका कारण अनेक प्रतिभाशाली इंजीनियर व तकनीकी कारीगर धन व कार्य की अच्छी परिस्थितियों के लालच में विदेश चले जाते हैं।

प्रगतिशील कहे जाने वाले अमरीकी तथा योरोप के राष्ट्रों में अधिकांश जनसंख्या या तो शहरों में रहती है या बड़े बड़े कस्बों में। वहां जितने भी गांव हैं वे भी एक प्रकार से शहरों के समान हैं। कारण, आज उन देशों के गांवों में जीवनोपयोगी सभी प्रकार की सुविधाएं प्राप्त हैं। उदाहरण के लिए बिजली, स्कूल, अस्पताल, पोस्ट आफिस, तार घर, रेडियो टेलीविज़न आदि जैसी सभी सुविधाए वहां प्रत्येक गांव में मौजूद हैं। सभी गांव पक्की सड़कों के जरिए मुख्य सड़क से या शहरों से सम्बन्धित है, तथा आवागमन व परिवहन के साधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं जबकि हमारे देश में स्थिति विपरीत है तथा प्रगति की गति अपेक्षाकृत धीमी है।

हमारे देश में 80 प्रतिशत लोग गांवों में रहते हैं। हालांकि पिछले कुछ वर्षों में भारतीय ग्रामों की स्थिति में काफी परिवर्तन हुआ है। उदाहरण के लिए हरियाणा तथा केन्द्रशासित क्षेत्र दिल्ली के शत प्रतिशत गांवों में बिजली है। प्रत्येक राज्य के अनेक गांवों में आज ट्रैक्टर व खेती अन्य विकसित औज़ार मौजूद हैं, मगर ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति को फिर भी अधिक सन्तोषजनक नहीं कहा जा सकता। इसका मुख्य कारण कृषि साधनों का यथेष्ठ मात्रा में तथा समय पर उपलब्ध न होना बिजली व सड़कों का अभाव, विज्ञान तथा टैक्नालोजी के समुचित प्रसार का न होना ही कहा जा सकता है।

वैज्ञानिक साहित्य

जैसा कि सर्वविदित है, अधिकांश विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था तथा प्रगति का दारोमदार कृषि पर निर्भर है। पिछड़े हुए होने के कारण ऐसे देशों की जनसंख्या में भी वृद्धि होती है। खेती की प्रगति समुचित खाद्यान्न, उम्दा फल, दूध उत्पादन, मुर्गीपालन, मछली पालन आदि बातों की जानकारी देने के लिए विज्ञान तथा टेक्नालोजी के प्रसार की नितांत आवश्यकता है। यदि भारत जैसे विशाल देश में ज्ञान विज्ञान का प्रसार करना है तो उसके लिये हमें और अधिक द्रुतगति से कार्य करना होगा। इस संदर्भ में हमें गंम्भीरता पूर्वक विचार करने की जरुरत है तथा देश के उच्च कोटि के वैज्ञानिकों की सलाह मानने की आवश्यकता है। वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के महानिदेशक डा० नायडुम्मा द्वारा कुछ समय पहले सभी भारतीय भाषाओं में ग्रामीण दस्तकारों, कारीगरों तथा तकनीकी लोगों के लिए उपयोगी आधुनिकतम तकनीकी सामग्री युक्त पुस्तकें तैयार करने का सुझाव दिया गया था। अच्छा तो यह होगा कि ऐसी पुस्तकें हिन्दी और क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशित की जाएं। ऐसी पुस्तकों के प्रकाशन से न केवल उन्हीं लोगों को मदद मिलेगी जो विभिन्न प्रकार की दस्तकारियों में कार्यरत हैं बल्कि पुस्तकों की उपलब्धि से अन्य लोग जिनकी उन व्यवसायों में रुचि है तथा सम्बंधित साहित्य के अभाव में कुछ न कर पाने के लिए मजबूर हैं, वो भी लाभान्वित हो सकेंगे। ऐसी पत्रिकाओं तथा प्रचार सामग्री से ही विज्ञान तथा टेक्नालोजी ग्रामों में कदम बढ़ा पाएंगे।

नवम्बर 1975 में हमारे वर्तमान रक्षा मंत्री श्री जगजीवन राम (भूतपूर्व कृषि तथा सिंचाई मंत्री) ने देश के औद्योगिक संगठनों को सुझाव दिया था कि वे ग्रामों के विकास तथा ज्ञान-विज्ञान के प्रसार के लिए किसी भी गांव को अपना दत्तक बना लें तथा वहीं ज्ञान विज्ञान के प्रसार सम्बंधी सामग्री मुहैया करें। हालांकि अभी यह कार्य छुटपुट ढंग से ही किया जा रहा है, मगर आज आवश्यकता इसमें उत्तरोत्तर वृद्धि करने की है। केन्द्रीय मंत्री ने सुझाव दिया था कि औद्योगिक प्रतिष्ठानों द्वारा गांवों का चयन कच्चे माल तथा उपभोग्य सामान की खपत को ध्यान में रखकर किया जा सकता है। उनके सुझाव का एसोसिएटेड चैम्बर्स आफ कामर्स एण्ड इन्डस्ट्री, आल इण्डिया मैन्यूफैक्चर्स आर्गेनाइजेशन, इण्डिया कॉटन मिल फैडरेशन और यूनाइटेड प्लान्टर्स ऐसोसिऐशन तथा फर्टीलाइज़र कार्पोरेशन जैसे महत्वपूर्ण औद्योगिक संगठनों द्वारा स्वागत किया गया था।

[शेष पृष्ठ 34 पर]

कुरुक्षेत्र के पच्चीस वर्ष

एस० एन० भट्टाचार्य

दो अक्तूबर 1977 को सामुदायिक विकास कार्यक्रम अपने जीवन के पच्चीस वर्ष पूरे कर रहा है। इस कार्यक्रम के साथ-साथ 'कुरुक्षेत्र' अंग्रेजी पत्रिका भी रजत जयन्ती मना रही है जबकि कुरुक्षेत्र (हिन्दी) अपने जीवन के 22 वर्ष पूरे कर रहा है। ग्रामीण पुनर्निमाण के इस रोमांचकारी नाटक में इस पत्रिका ने क्रिया-प्रधान कार्यक्रम को जिसमें हजारों सरकारी और गैर सरकारी कार्यकर्ताओं ने भाग लिया, दार्शनिक आधार देकर महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

जैसा कि सर्वविदित है, सामुदायिक विकास कार्यक्रम 1952 में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जन्मदिवस दो अक्तूबर को सरकारी तत्वावधान में शुरू हुआ। इसके साथ-साथ भारत सरकार के सूचना व प्रसार मंत्रालय के प्रकाशन विभाग द्वारा पहली बार औपचारिक रूप से यह पत्रिका प्रकाश में आई। परन्तु यह कहना भी ठीक नहीं कि पत्रिका उस दिन प्रकाशित हुई। दर असल यह पत्रिका तो काफी पहले शुरू हो चुकी थी जबकि दिल्ली से 85 मील की दूरी पर शरणार्थी पुनर्वास केन्द्र में लगे कार्यकर्ताओं के लिए यह प्रेरणा का स्रोत बनी हुई थी। सामुदायिक विकास की विचार-धारा को मूर्त्तरूप नीलोखेड़ी में मिला। उसके बाद यह कार्यक्रम समूचे देश में शुरू हुआ।

यह 1948 की बात है। उस समय कुरुक्षेत्र साप्ताहिक 4 पृष्ठ में निकलता था। इसका कोई मूल्य नहीं था और कुल 500 प्रतियां छपती थीं। उस समय कुरुक्षेत्र शिविर के पास एक क्षेत्र में जहां सांप रहते थे, सियार बोलते थे, जहां झाड़ झंकाड़ थे, पश्चिमी पाकिस्तान से आए चन्द शरणार्थियों ने श्री एस०के० डे के नेतृत्व में एक नया जीवन शुरू किया। उन्होंने संकल्प किया कि वे सरकार पर निर्भर रहने की अपेक्षा अपने पैरों पर खड़े होंगे और काम करेंगे। धीरे-धीरे और लोग भी वहां आए और नीलोखेड़ी गांव ने छः हजार की आबादी वाले एक कस्बे का रूप धारण किया जहां विभिन्न कार्यकलाप चल रहे थे।

समाचार पत्रिका ने घोषणा की "आज कुरुक्षेत्र की लड़ाई का रूप बदल गया है। आज यह लड़ाई लड़ी जा रही है ऐसे भाइयों को मिलाने के लिए जो संघर्षरत थे। जिससे वे जीवन-चक्र को मिल-जुल कर कंधे से कंधा मिला कर प्रगति पथ पर आगे ले जा सकें।" अब कोई भाई अपने भाई से नहीं लड़ेगा जैसा कि अतीत में कुरुक्षेत्र के मैदान में हुआ। यहां हर व्यक्ति खेत में दूसरे के लिए काम करेगा और किसी को भी एक इंच भूमि से वंचित नहीं करेगा जैसा कि कौरवों ने पांडवों के लिए किया था। यह थी वह भावना और मूल प्रेरणा जो कुरुक्षेत्र और इस नए क्षेत्र के कार्यक्रमों के लिए शुभकामनाएं देते समय श्री राजगोपालाचारी ने अपने एक सन्देश में व्यक्त की थी।

विशेष अवसरों, खास तौर पर विशिष्ट व्यक्तियों के आगमन पर इसके विशेषांक निकाले जाते थे। प्रधान मंत्री, पुनर्वास मंत्री तथा अन्य मंत्रियों के साथ-साथ कई विदेशी महानुभाव नीलोखेड़ी में हो रहा चमत्कार देखने के लिए आए। अंधकार में आशा का प्रकाश नजर आया। बस्ती के लोगों का इस पुरानी कहावत में विश्वास था, "अंधेरे को कोसने की जगह एक दीपक जलाओ" जब गांधी जी द्वारा दक्षिण अफ्रीका में फोनिक्स में किया गया समझौता सत्याग्रह जैसे विचार को जन्म दे सकता है जिसने आजादी की लड़ाई में शक्तिशाली साम्राज्यवाद के विरुद्ध एक महत्वपूर्ण हथियार का काम किया तो उसी तरह नीलोखेड़ी में उखड़े हुए लोगों के पुनर्वास के प्रयासों ने समग्र सामुदायिक विकास के विचार को जन्म दिया जिसकी चर्चा आज हर तरफ सुनाई देती है।

प्रारम्भ से ही कुरुक्षेत्र जहां समाचार देता था वहां नए विचार भी देता था। पुनर्वास के गम्भीर प्रयासों के साथ-साथ पाठकों को हल्की फुल्की चीजें भी पढ़ने को मिल जाती थी। जैसा कि इस प्रायोजना के अवैतनिक प्रशासक श्री एस० के० डे ने सोचा था, इस नए प्रयोग का उद्देश्य तीन शत्रुओं—गरीबी, बीमारी और अज्ञान का उन्मूलन था। वह पूछते हैं, "आखिर समुदाय क्या है", फिर उसका उत्तर स्वयं ही देते हैं, "समुदाय और भीड़ में अन्तर होता है वैसे ही जैसे एक बेतरतीब उगे जंगल और उद्यान के बीच होता है।

उनकी बातें कभी-कभी ऐसी भी होती थीं जिसे उनके सहयोगी भी नहीं समझ सकते थे। इसके कुछ उदाहरण बड़े अटपटे हैं और जन साधारण की समझ से बाहर हैं। उनमें लक्षण व व्यंजनाओं की भरमार होती थी।

जब योजना आयोग के अंग के रूप में योजना प्रचार कार्यक्रयों के अन्तर्गत सामुदायिक विकास कार्यक्रम को लिया गया तब भी 'कुरुक्षेत्र' में गम्भीर विचारों के साथ-साथ इसमें कुछ हल्का फुल्कापन भी रहा। सरकारी कार्यकलाप पर व्यंग्य चित्र हुआ करते थे पर किसी ने भी रत्ती भर भी नाक नहीं सिकोड़ी। 1953 के प्रारम्भ में इलाहाबाद में नव गठित समाज शिक्षा संगठक प्रशिक्षण केन्द्र के समाज शिक्षा संगठकों ने सामुदायिक विकास कार्यक्रम के प्रशासक को एक ज्ञापन दिया जिसमें उन्होंने वेतन बढ़ाने की मांग की। इसे इस शीर्षक के साथ छापा गया "अंधा बांटे रेवड़ी"

उटकमंड में विकास आयुक्त सम्मेलन के बाद वार्षिक सम्मेलन होते थे जिसका उद्देश्य कार्यक्रम का लेखा जोखा प्रस्तुत करना और आगे का कार्यक्रम तय करना होता था। इनमें देश के चोटी के अधिकारी परस्पर मिलते थे। इन्हीं दिनों एक कविता छपी जिसका तात्पर्य था कि समूचे देश के प्रतिनिधि ऊटी के स्वास्थ्य वर्धक स्थान में इक्ट्ठा होते हैं यह सोच

ने के लिए कि अनाज की उपज कम क्यों होती है और सघन कृषि कार्यों के बारे में अपने सुझाव देते हैं। 1910-20 के प्रारम्भिक वर्षों में ब्रिटिश सरकार द्वारा बनाए गए कृषि आयोग ने इसी आशय की बात कही थी। प्रश्न यह है ऐसा कौन करेगा ? इस सम्बन्ध में प्रशासकों ने कोई निर्देश नहीं दिया।

स्तम्भ 'फ्रैंक्स कोर्नर' में ऐसे व्यक्तियों की कहानियां दी जाती थीं जिन्होंने सामुदायिक विकास कार्यक्रम के प्रारम्भिक चरणों में कार्य में अपने को रत कर दिया। इस प्रक्रिया में एक दुखद घटना हुई। हिमाचल प्रदेश के एक विकास आयुक्त को उसी दिन शाम को एक गांव के लोगों से मिलने जाना था। उन्होंने उफनती हुई पहाड़ी नदी को पार करना चाहा और अपनी जान गंवा दी। सिर्फ इसलिए क्योंकि वे समझते थे कि उन्हें उसी दिन उस गांव में जाना जरूरी था, भले ही नदी अपने पूरे वेग में थी।

1953 के प्रारम्भ में 'कुरुक्षेत्र' के सम्पादक ने पाठकों से ऐसी रचना देने के लिए कहा जो हल्की फुल्की हों, विशेष तौर पर जिनमें हास्य व्यंग्य का पुट हो। सामुदायिक विकास और राष्ट्रीय प्रसार सेवा खंडों के विस्तार के साथ-साथ पत्रिका का रूप भी बदला उस समय सामुदायिक कार्यक्रम प्रशासन के प्रशासक ने पत्रिका में अपील की, "व्यावसायिक पत्रिकाओं की आज कमी नहीं है। आज हमें ऐसी पत्रिका की जरूरत है जो कार्य-परक पत्रिका हो।

यह जरूरी नहीं कि कार्य-परक पत्रिका में हास्य व्यंग्य न हो। सम्पादक 'कुरुक्षेत्र' ने एक वरिष्ठ पत्रकार को, जिन्हें कुरुक्षेत्र के सम्पादक मंडल में नामजद किया गया, एक पत्र में एक बैठक की सूचना देते हुए लिखा कि उसमें सामुदायिक विकास और सहकारिता मंत्री भी भाग लेंगे। पत्रकार ने उत्तर में सम्पादक को लिखा कि उन्होंने यह भली प्रकार देख लिया कि सम्पादक मंडल की बैठक में मंत्री महोदय भी भाग लेंगे

जल्दी ही प्रशासन को मंत्रालय का रूप मिला और इसकी गतिविधियां बढ़ीं। देश में तीन चरण वाला पंचायती राज कार्यक्रम चालू हुआ तो सहयोगी पत्रिका के रूप में 'पंचायती राज' पत्रिका शुरू हुई। यह कुछ अवधि तक अलग पत्रिका के रूप में रही बाद में यह 'कुरुक्षेत्र' में मिल गयी। अंग्रेजी 'कुरुक्षेत्र' जो अब तक मासिक पत्रिका थी उसे पाक्षिक बनाया गया। वार्षिक अंक के अलावा सामुदायिक विकास कार्यक्रम के विभिन्न अंगों पर प्रकाश डालने के लिए नियमित रूप से हिन्दी अंग्रेजी दोनों पत्रिकाओं के विशेषांक प्रकाशित होते हैं। पत्रिका की नीति निर्धारण के लिए एक सशक्त सम्पादक-मंडल का गठन किया गया जिसमें कई संसद् सदस्यों को भी रखा गया।

तत्कालीन सामुदायिक विकास और सहकारिता मन्त्रि श्री एस० के० डे० इसमें इतनी ही रुचि लेते रहे जितनी उस समय जब इसका पहला अंक निकाला था। पत्रिका के सम्पादक के लिए उनके दरवाजे हमेशा खुले थे और वह भी मन्त्रि महोदय से निदेश लेते थे। श्री डे० शुरू से अन्त तक, ऊपर के शीर्षक से अन्त में दी गयी मुद्रण की लाइन तक, पत्रिका को स्वयं पढ़ते थे और यह भी देखते थे कि यह नियमित रूप से छपे। महीना खत्म होने नहीं पाता था कि वे पूछना शुरू कर देते थे कि पत्रिका कब आ रही है। कई बार तो प्रशासन परेशानी में पड़ जाता था और बगलें झांकने लगता था। एक बार महीने की दूसरी तारीख को मन्त्रि महोदय हवाई जहाज से मद्रास हवाई अड्डे पर उतरे कि विकास आयुक्त ने उनके हाथों में 'कुरुक्षेत्र' का नवीनतम अंक थमा दिया। इस कार्यकुशलता की सराहना किया जाना स्वाभाविक था।

कई बार मामूली चीजों से भी गम्भीर बातें पैदा हो जाती थीं। एक बार एक सम्पादक ने मंत्रि महोदय के सख्त आदेशों के बावजूद उनका चित्र पत्रिका में छाप दिया। उन्होंने तुरन्त कर्त्तव्य की अवहेलना के लिए उक्त सम्पादक के तबादले के लिए कहा। हम लोगों ने अनुभव किया कि यह अन्याय हुआ है। चित्र की अपनी उपयोगिता थी क्योंकि इसमें चित्र का केन्द्र श्री वी० टी० कृष्णामाचारी थे जिन्होंने वार्षिक सम्मेलन की अध्यक्षता की थी। वे और श्री डे साथ-साथ बैठे थे। यह कहा गया कि क्षेत्र में काम कर रहे हजारों कार्यकर्ताओं को यह जानने का अधिकार है कि हमारे मंत्री कैसे नजर आते हैं। वह इस तर्क को मान गए और तबादले के आदेश को रद्द कर दिया गया। शेक्सपियर ने भी कहा था, "जूलियस सीजर तक अपनी प्रशंसा में बह गया।"

सभी सम्पादक इतने भाग्यशाली नहीं थे। एक सहायक सम्पादक को 'कुरुक्षेत्र' से तुरन्त सम्बन्ध विच्छेद करने को कहा गया। मंत्रि महोदय कृषि भवन में अपने कमरे में कुछ ग्रामीणों की सभा की अध्यक्षता कर रहे थे। वह बेचारा सोच भी नहीं सकता था कि मंत्रि महोदय निरीक्षण के लिए आ सकते हैं यह देखने के लिए कि सम्पादकीय कर्मचारी कैसे काम कर रहे हैं। उसने हर तरह का जवाब दिया पर कोई लाभ नहीं।

'कुरुक्षेत्र' के सम्पादक का काम आराम दायक नहीं था। मंत्री अपनी प्रिय पत्रिका पर निरन्तर नजर रखते थे। बाद के सम्पादकों ने बहुत अच्छा काम किया। भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सन्देश वाहक के रूप में पत्रिका को अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिली। अमेरिका और इंग्लैंड के सामुदायिक विकास संस्थान और सम्बन्ध संस्थान इसे नियमित रूप से मंगाते हैं। डा० कार्ल सी० टेलर, टी० आर० बत्तेन, डगलास एनर्स्मिगर जैसे सामुदायिक विकास पर अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विद्वान नियमित रूप से लिखते रहे हैं।

जहां तक जगह का सम्बन्ध है प्रशासन के लिए समस्या भी पैदा हुई क्योंकि अतिरिक्त जगह का सवाल था जब कि अभी भी ग्रामीण विकास विभाग के अधिकारियों के लिए स्थान की समस्या बनी हुई है।

1966 में सामुदायिक विकास और सहकारिता मंत्रालय कृषि और सिंचाई मंत्रालय में शामिल होकर इसका एक

विभाग बन गया। कार्यक्रम के साथ-साथ 'कुरुक्षेत्र' उसी तरह चलता रहा। यह बात जरूर है कि अब कृषि सम्बन्धी मामलों की ओर झुकाव हो गया। गांवों में कमजोर और गरीब वर्गों के विकास के लिए नए कार्यक्रम शुरू किए गए। ऋण और कृषि विपणन इस नए विभाग के अंतर्गत आ गए।

अब पत्रिका को नए कार्यक्रमों जैसे लघु किसान विकास एजेंसी, सीमांत किसान और कृषि मजदूर एजेंसी, सूखा-ग्रस्त क्षेत्रों के लिए कार्यक्रम, पर्वतीय क्षेत्र विकास कार्यक्रम, वन्य जाति विकास कार्यक्रम आदि के प्रचार की ओर ध्यान देना था। ऋण के कारण आंकड़ों की भरमार हुई, आंकड़े जो विकास के सूचक थे। विभाग को ग्रामीण विकास विभाग का नया रूप दिया गया। हमने सांप की केंचुली की तरह जैसा गीता में कहा गया है "वासांसि जीर्णानि यथा विहाय" पुराने वस्त्र उतार कर नए वस्त्र धारण किए। हमने नए कार्यक्रमों के अनुरूप अपने को ढाला।

पर 'कुरुक्षेत्र' ने अपना मूलभूत दृष्टिकोणों, ग्रामीण विकास और कार्यक्रमों को जनता द्वारा चलाया जाना नहीं छोड़ा। पत्रिका ने ग्रामीण गरीबों और कमजोर वर्गों का झंडा उठाया। ग्राम विकास के नन्हें पौधो को 'कुरुक्षेत्र' से हमेशा योगदान मिला। हमने चीनी कहावत का पालन किया, "अगर तुम एक साल के लिए बोना चाहते हो तो धान बोओ। अगर दस साल के लिए बोना चाहते हो तो फलों के पेड़ लगाओ लेकिन अगर तुम सौ साल के लिए योजना बना रहे हो तो इंसान पैदा करो।"

मैं पिछले 25 वर्ष से 'कुरुक्षेत्र' को देखता रहता हूं। मुझे इसमें कुछ कभी अखरती है। इसमें कार्यक्रमों की बहुलता रहती है। जनता व्यक्ति और समुदाय जिनके लिए ये कार्यक्रम बनते हैं उनकी ओर यह केन्द्रित नहीं है। मानवीय कहानियों की इसमें कमी नजर आती है। सिद्धान्तों का प्रतिपादन अच्छा है पर यह चल रहे कार्यों की उपेक्षा करके नहीं होना चाहिए। पहले जो इसका स्वरूप था एक कार्य-परक पत्रिका का वह बना रहना चाहिए। मैं अभी भी राजबहादुर या इद्रीस मुल्ला की कहानियों की खोज में रहता हू जो गाँव के मामूली आदमी थे और सामुदायिक विकास कार्यक्रम से जिनके जीवन का रूप बदल गया। किस तरह विस्तार खंड एजेंसियों के सहयोग से उन्होंने छोटे पैमाने पर मुर्गी-पालन या सुअर पालन उद्योग शुरू किया। बांस की पाइपों के जरिए सिंचाई का नया तरीका विकसित किया गया था छोटी-छोटी जलधाराओं के जरिए छोटे किसानों को अतिरिक्त आमदनी मिली, जैसा कि 'कुरुक्षेत्र' के पिछले किसी अंक में दिया गया था। आंध्र प्रदेश में एक भूमि हीन किसान ने एक विकास खंड अधिकारी से सीधे तौर पर पूछा "साब मेरे लिए क्या लाया" आज यह प्रश्न देश के लाखों गरीब और दलित लोग पूछ रहे हैं। क्या हम उन्हें ऐसे लोगों के बारे में बता रहे हैं जो देश के अलग-अलग भागों में इन कार्य-क्रमों के जरिए सामाजिक और आर्थिक रूप से अपना विकास कर रहे हैं? ऐसी गाथाओं की कमी नहीं है। जरूरत उन का पता करके उन्हें लोगों तक पहुंचाने की है।

जहां तक कुरुक्षेत्र (हिन्दी) का सम्बन्ध है, ग्रामीण पाठकों के लिए इसमें बड़ी रोचक सामग्री प्रस्तुत की जाती है। ग्रामीण विकास के बारे में गम्भीर से गम्भीर सामग्री प्रस्तुत करने के अलावा कविता, कहानी रूपक आदि के माध्यम से बड़ी रोचक भाषा में जानकारी दी जाती है। पाठकों की राय नामक स्तम्भ में पाठकों के विचार प्रस्तुत किए जाते हैं। इन स्तम्भों की ग्राम वासी पाठकों ने बड़ी सराहना की है और वे समय-समय पर इन स्तम्भों के बारे में सराहना के उद्गार भेजते रहते हैं। जहां पहले कुरुक्षेत्र (हिन्दी) में अक्सर अनूदित सामग्री प्रस्तुत की जाती थी वहां अब इसमें मौलिक रचनाओं का बाहुल्य होता है। ★

विज्ञान और टेक्नालोजी...... [पृष्ठ 31 का शेषांश]

विश्वविद्यालयों की भूमिका :

गत वर्ष अगस्त मास में आयोजित कृषि विश्वविद्यालय के कुलपतियों का एक सम्मेलन हुआ। इसमें सिफारिश की गई थी कि विज्ञान तथा टेक्नालोजी को गांवों तक पहुंचाने में हमें भरसक प्रयास करने चाहिए। वैज्ञानिकों को चाहिए कि विश्वविद्यालयों में की गई वैज्ञानिक खोजों के लाभप्रद परिणामों को गावों में रहने वाले किसानों तथा भूमिहीन मजदूरों तक पहुंचाएं तथा देश में विविध प्रकार के उत्पादन बढ़ाने में स्वावलम्बी बनाने के प्रयत्न करें। उदाहरण के लिए राष्ट्रीय प्रदर्शनों की योजना इस संदर्भ में अत्यन्त सफल रही है। अब समय आ गया है कि हर क्षेत्र में हम अपने पैरों पर खड़े हों। इसी में देश का कल्याण निहित है। गांवों का स्तर उठाने के लिए विश्वविद्यालयों की छोटी-छोटी समस्याओं के हल के लिए विधिवत् योजनाएं बनानी चाहिए। ★

317, कृषि भवन
नई दिल्ली.110001

राष्ट्रीय एकता में ये बाधाएं क्यों ?

डा० ब्रज नारायण सिंह

भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान महात्मा गांधी ने कहा था 'सच्चा स्वराज्य मुठ्ठी भर लोगों द्वारा सत्ता हासिल करने से नहीं बल्कि सत्ता का गलत इस्तेमाल होने पर जनता द्वारा उसके प्रतिकार करने की ताकत हासिल करने से आएगा।' स्वाराज्य का अर्थ सरकारी नियन्त्रण मुक्त होने के लिए लगातार प्रयत्न करना—फिर वह नियन्त्रण विदेशी सरकार का हो या स्वदेशी सरकार का। जो बात गांधी जी ने स्वराज्य के विषय में कहीं वही बात आज आजादी के तीस वर्षों बाद आजादी को सुरक्षित बनाए रखने के सन्दर्भ में भी कही जा सकती हैं।

आजादी हमें मिल गई और हमने इतने वर्षों उसको भोग भी लिया तथा कितने उत्थान पतनों के बीच हमारा राष्ट्र गुजरा पर जिस समग्र एवं तेजस्वी राज्य की कल्पना हमारे स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों ने मन में संजोई थी क्या वह आज भी पूर्ण हो सकी है यह प्रश्न हमारे राष्ट्र के सामने मुंह बाए खड़ा हुआ है। विभिन्न राजनैतिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं के द्वारा राष्ट्रीय एकता को अखंड बनाए रखने के लिए जो प्रयत्न अबतक किए गए, यदि उनका संक्षिप्त ब्यौरा भी दिया जाए, वह अपने आप एक पुस्तक का रूप ले लेगा पर इन सारे प्रयत्नों में क्या हमें सफलता मिल सकी है। हमें स्पष्ट रूप से कहना पड़ेगा, नहीं! कारण कि इन समस्याओं को बहुधा हमने राजनैतिक नजरिए से अधिक देखा, मानवीय धरातल पर कम। अतः यदि दल गत राजनीति से प्रथक् होकर हम इन समस्याओं का मानवीय धरातल पर निदान खोजें तो शायद हमें ज्यादा सफलता मिल सकेगी।

भावनात्मक एकता के संदर्भ में सबसे पहली बाधा हमारी जाति-व्यवस्था है। सहस्रों वर्षों से हिन्दू समाज जिस जाति व्यवस्था में बटा हुआ है उसका व्यावहारिक या कर्मगत रूप तो सदियों पहले समाप्त हो गया पर उसका दूषित एवं विकृत बाहरी ढाचा आज भी वैसा ही बना हुआ है। आए दिन हरिजनों के प्रति किए गए अमानुषिक आत्याचार हमारी इसी संकीर्ण जाति व्यवस्था के उदाहरण हैं। हरिजन उत्थान को लेकर महात्मा जी के अनुयाइयों ने आजादी के तत्काल बाद से लेकर आज तक किए वे प्रयास वास्तव में दिखावा बनकर इसलिए रह गए कि हमारा मानस आज भी ऊँच-नीच की भावना से वास्तविक अर्थों में मुक्त नहीं हो सका है। हमने हरिजनों के लिए 'रिजर्वेशन' किए पर इससे भी हम उन्हें पहले दर्जे का नागरिक नहीं बना सके या दूसरे शब्दों में वास्तविक अर्थों में उन्हें सवर्णों की समकक्षता में बराबरी का दर्जा न दे सके। उन्हें रातनैतिक अधिकार दिए जाने की मांग बार-बार दुहराई गई पर समस्या के नैतिक आधार की निरन्तर उपेक्षा होती रही। परिणाम स्वरूप इतनी लम्बी कालावधि के बाद भी हरिजन समस्या जटिल ही बनी हुई है। जब तक यह लड़ाई राजनैतिक स्तर के स्थान पर सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक स्तर पर नहीं लड़ी जाती, हमारी राष्ट्रीय एकता विखंडित ही रहेगी।

जाति के स्तर से हटकर हमारी दूसरी संकीर्णता है प्रान्तीयता की। हम आजाद भारत के नागरिक तो हैं पर बहुधा हम भारतीय के स्थान पर बंगाली, गुजराती, पंजाबी, मराठा, तमिल तथा मलयाली आदि पहले बन जाते हैं और अपने क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति हेतु अपनी प्रान्तीयता की भावना का बड़ी बारीकी से इस्तेमाल करते हैं। यह समस्या भी अपने मूल राष्ट्रीय स्वरूप को खोकर ओछे स्वार्थों की ओर निरन्तर बढ़ती जा रही है। राष्ट्र के संदर्भ में भाषावार प्रान्तों का गठन इसलिए किया गया था कि उससे प्रान्तों के शासन प्रबन्ध एवं सांस्कृतिक एकता को बनाए रखने में सुगमता हो सके पर जब यह शासन प्रबन्ध के प्रखंड हमारी राष्ट्रीय चेतना को खंडित करने लगते हैं तब हमारा राष्ट्रीय जीवन विखंडित तो होता ही है हमारी राष्ट्रीय एकता खतरे में पड़ जाती है। इस समस्या से छुटकारा पाने का यही रास्ता है कि हम अधिक से अधिक अन्तर्प्रान्तीय वैवाहिक सम्बन्धों से जुड़ें जिससे एक उदार नवीन सांस्कृतिक चेतना का विकास हो सके।

प्रान्तों की समस्या से जुड़ा हुआ प्रश्न है भाषा का और भारत की विभिन्न भाषाओं के साथ जुड़ा है राष्ट्रभाषा का प्रश्न। भारतीय संविधान में हिन्दी राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकृत है पर आज भी हिन्दी को उसका वास्तविक स्थान नहीं मिल सका है, कारण कि अंग्रेजी वर्चस्व आज भी बना हुआ है और कई बार यह संदेह होने लगता है कि क्या हिन्दी कभी भी अपना वास्तविक स्थान प्राप्त कर सकेगी। शायद तब तक नहीं जब तक संपूर्ण राष्ट्र अपनी राष्ट्रभाषा के हीनता क्रोध से उभर नहीं पाता साथ ही जब तक हम हिन्दी भारती अपने निजी-जीवन में अंग्रेजी से हिन्दी को अधिक मान्यता नहीं देते। जहां तक हिन्दी का अन्य प्रान्तीय भाषाओं से श्रेष्ठता या अन्य प्राण्तीय भाषाओं पर उसके लादे जाने का प्रश्न है, इसे भी हमें राज-नैतिक दृष्टि से नहीं देखना होगा। एक भाषा से देश की राष्ट्रीय एकता का जो प्रश्न जुड़ा हुआ है हमें इस समस्या पर उस दृष्टि से विचार करना चाहिए। हमें यह विचार करना होगा कि क्या सदा-सदा के लिए हमें अंग्रेजी का मुहताज बना रहना या अपने देश की चिंतन प्रक्रिया को अपनी राष्ट्रीय भाषा के माध्यम से स्वावलम्बी बनाना है। भारतेन्दु बाबू के शब्दों 'निज भाषा उन्नति अहै निज उन्नति का भूल' को यदि हम सच्चे अर्थों में ग्रहण करना चाहते हैं तो हमें शीघ्र से शीघ्र अपनी समस्त प्रान्तीय भाषाओं को विकसित

कर एक संक्षेप अभिव्यक्ति वाली राष्ट्रभाषा का निर्माण करना होगा जो हमारी सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण बनाए रखते हुए हमारी राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ बनाएगी।

इस दिशा में बहुधा यह तर्क दिया जाता है कि अंग्रेजी हमारे लिए विश्वज्ञान की खिड़की के रूप में कार्य करती है पर विश्व में जर्मनी, जापान, रूस जैसे देश भी हैं जिनकी अपनी राष्ट्रभाषाएं हैं और जिनका औद्योगिक तथा वैज्ञानिक विकास अंग्रेजी भाषा भाषियों से कम नहीं है। इतना ही नहीं जब स्वयं अंग्रेजी में अन्य देशों का साहित्य और विज्ञान अनूदित होकर तत्काल पहुंच जाता है तो ऐसा कोई कारण नहीं कि हिन्दी में भी वह प्रचुर साहित्य न उपलब्ध किया जा सके। अपेक्षा है केवल उस लगन की जिससे वह साहित्य अनूदित हो। जर्मन, रूसी तथा, फ्रेन्च तथा जापानी भाषाओं से यदि हमारा सीधा संबंध जुड़ जाए तो हमें केवल अंग्रेजी का मुहताज न रहना पड़े। भाषाविदों का ऐसा विचार भी है कि भारतवासी को जितना परिश्रम अंग्रेजी सीखने के लिए करना पड़ता है उससे शायद कम प्रयत्न में ही विश्व की अन्य भाषाओं को सीखा जा सकता है। इसके साथ ही हिन्दी भाषाभाषी लोगों का यह अतिरिक्त उत्तरदायित्व भी बन जाता है कि वे कम से कम एक दक्षिणी भाषा अवश्य सीखें। सरकारी स्तर पर लोक सेवा आयोग द्वारा कुछ ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि परीक्षाओं में अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी को वरीयता मिले साथ ही केन्द्रीय सेवाओं में उत्तरी क्षेत्र के लोगों को उनके पूरे कार्यकाल में एक निश्चित अवधि के लिए दक्षिणी प्रदेशों में और दक्षिण भारतीय लोगों को उत्तरी प्रदेशो में कार्य करना अनिवार्य कर दिया जाय। इससे देश की अखण्डता एवं हमारी सांस्कृतिक एकता को निश्चित रूप से बढ़ावा मिलेगा। उत्तर-दक्षिण की पारस्परिक सन्निकटता से इस भ्रम का निवारण भी हो सकेगा कि हिन्दी को जबरदस्ती हिन्दी क्षेत्रों पर लादा जा रहा है, या लादे जाने की संभावना है। क्योंकि यह केवल हिन्दी का ही प्रश्न नहीं है बल्कि हिन्दी के स्थान पर यदि हम किसी भी प्रान्तीय भाषा को राष्ट्रभाषा के स्थान पर प्रतिष्ठित करना चाहें तो उसके संबंध में भी अन्य प्रान्त में इसी प्रकार की आंशका हो सकती है। इसलिए प्रश्न हिन्दी का नहीं, देश के नव निर्माण के लिए एक सशक्त तथा सक्षम अभिव्यक्ति वाली राष्ट्र भाषा का है जिसके अभाव से भावनात्मक एकता की कल्पना एक दुराशा मात्र ही होगी।

भाषा से हटकर जब हम विभिन्न धर्मों पर अवलंबित अनेक धर्मावलम्बियों को इस भारत-भूमि में देखते हैं तो हमारे सामने धार्मिक अल्पसंख्यकों की भी समस्या अपने जटिलतम रूप में सामने आ जाती है। हमारा राष्ट्र एक धर्म-निरपेक्ष राष्ट्र है जिसमें साम्प्रदायिक भेद-भाव को या साम्प्रदायिकता की भावना को बल मिलना देश की एकता के लिए घातक होगा पर राजनैतिक उद्देश्यों से प्रेरित पिछले तमाम वर्षों के प्रयन्न अल्पसंख्यकों की समस्या का सफल विधान नहीं प्रस्तुत कर सके। अतः इस दिशा में भी हमें ज्यादा ईमानदारी से कार्य करना होगा अन्यथा देश की एकता विखंडित ही रहेगी।

अंत में राष्ट्र की भावनात्मक एकता के संदर्भ में संकृत की उक्ति 'आत्मार्थे पृथ्वीत्यजेत' को यदि दार्शनिक सीमाओं से प्रथक कर उसे राष्ट्रीय जीवन के लिए साक्षेम रूप में ग्रहण करें तो शायद बातें आसानी से स्पष्ट हो जाएगी। कुटुम्ब, ग्राम, नगर, प्रांत आदि का संबंध राष्ट्र की आत्मा के रूप से स्थापित किया जाए तो राष्ट्रीय एकता के लिए इन छोटी-छोटी सीमाओं का सहजता से उत्सर्ग किया जा सकता है और तब हमारा देश एक नई सांस्कृतिक चेतना से समुन्नत होकर शक्तिशाली राष्ट्र का रूप धारण कर सकेगा।

36. ब्रजनारायण सिंह
बी 24 रामप्रस्थ कालोनी
पो. चिकम्बर पुर दिल्ली-यू-पी सीमा

भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास

किसी भी देश के औद्योगिक विकास में लघु एवं कुटीर उद्योगों का विशेष महत्व होता है। भारतीय अर्थ व्यवस्थ। में पूंजी के अभाव, श्रम की अत्याधिकता तथा तकनी की ज्ञान के अभाव आदि के कारण इन उद्योगों की अत्याधिक आवश्यकता और इनका विशेष महत्व है। महात्मा गांधी ने तो यहां तक कहा कि "भारत का उद्धार कुटीर उद्योग धन्धों द्वारा ही सम्भव है।" इसी प्रकार के विचार स्व० पं० नेहरू ने भी प्रकट किए थे, उनके मतानुसार "भारत तभी औद्योगिक राष्ट्र होगा जबकि यहां पर लाखों की संख्या में छोटे-छोटे उद्योग हों।" भारतीय योजना आयोग ने भी लघु एवं कुटीर उद्योगों को विकास की आवश्यकता, रोजगार के अवसरों में वृद्धि, आय व रहन सहन के ऊंचे स्तर तथा अर्थ व्यवस्था के विकास के लिए उपयुक्त माना है। हमारे इन उद्योगों का अतीत बहुत ही गौरवपूर्ण था पर अंग्रेजी शासन काल में इन उद्योगों का पतन हो गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों के महत्व व आवश्यकता को देखते हुए सरकार ने इनके विकास की ओर विशेष ध्यान दिया है। सरकार द्वारा लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास के लिए किए जा रहे प्रयत्नों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :—

कुल्लू का शाल बुनती हुई महिला

विभिन्न समितियां

भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों की विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिए सरकार ने समय-समय पर विभिन्न समितियों की नियुक्तियां की और उनकी सिफारिशों को लागू कर लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास का मार्ग प्रशस्त किया है।

विभिन्न बोर्डों की स्थापना

सरकार ने देश में लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास के लिए विभिन्न प्रकार के लघु उद्योगों के लिए विशिष्ट बोर्डों की स्थापना की है। इन बोर्डों का मुख्य कार्य सम्बन्धित वस्तु का निर्माण, विकास व समस्याओं का अध्ययन करना है, तथा अपनी वस्तुओं का अधिकतम उत्पादन कर निर्यात भी करना है। इनमें से कुछ मुख्य बोर्ड ये हैं : कुटीर उद्योग बोर्ड 1948, केन्द्रीय सिल्क बोर्ड 1949, अखिल भारतीय दस्तकारी बोर्ड 1952, अखिल भारतीय

जवाहर लाल

हाथकरघा बोर्ड 1952, भारतीय खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग 1953, नारियल जटा बोर्ड 1954, लघु उद्योग बोर्ड 1954 तथा भारतीय दस्तकारी निगम 1958 में स्थापित किए गए थे जिनसे इन लघु उद्योगों के विकास में काफी मदद मिली है।

लघु उद्योग निगम

इस निगम की स्थापना सन् 1955 में 10 लाख रुपए से की गई। इस निगम का मुख्य कार्य लघु उद्योगों की वित्त व्यवस्था, शिल्पिक व आर्थिक सहायता देना, बड़े तथा छोटे उद्योगों में समन्वय स्थापित कराना तथा अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिए गए ऋण की गारन्टी करना है।

लघु एवं कुटीर उद्योगों की वित्तीय व्यवस्था के लिए सरकार ने अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं जिनसे लघु एवं कुटीर उद्योगों को अपने विकास करने में सहायता मिली है। सरकार लघु एवं कुटीर उद्योगों को राजकीय सहायता अधिनियम के अन्तर्गत ऋण प्रदान कर रही है। राज्यों में राज्य वित्त निगम लघु एवं कुटीर औद्योगिक इकाइयों को सस्ती ब्याज दर पर उन्हें अधिक से अधिक मात्रा में ऋण प्रदान कर रहे हैं। स्टेट बैंक आफ इण्डिया भी 'पाइलट स्कीम' के माध्यम से देश के लघु एवं कुटीर उद्योगों को आर्थिक सहायता प्रदान कर रहा है। व्यापारिक बैंक भी लघु एवं कुटीर उद्योगों को काफी मात्रा में ऋण प्रदान कर रहे हैं। 14 बड़े बैंकों का राष्ट्रीयकरण करने के पीछे एक उद्देश्य यह भी रहा है कि देश के लघु एवं कुटीर उद्योगों को पर्याप्त मात्रा में ऋण मिल सके। रिजर्व बैंक आफ इण्डिया भी अप्रत्यक्ष रूप से लघु उद्योगों के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है। रिजर्व बैंक ऋण देने वाली संस्थाओं को उनके द्वारा लघु एवं कुटीर उद्योगों को दिए जाने वाले ऋणों के पुनः भुगतान की गारन्टी करता है और इस प्रकार वित्तीय संस्थाओं को लघु उद्योगों को ऋण देने को प्रेरित करता है।

भारत सरकार ने विभिन्न पंचवर्षीय योजना के माध्यम से लघु एवं कुटीर उद्योग का विकास करने का प्रयत्न किया है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास के लिए अधिकाधिक धन राशि खर्च करने का प्रावधान किया है। नीचे की तालिका से यह स्पष्ट है :

योजनाओं में प्रावधान

(राशि करोड़ों रुपये में)

प्रथम पंचवर्षीय योजना	42
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	180
तृतीय पंचवर्षीय योजना	214
तीन वार्षिक योजनाएं	144
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	293
पांचवी पंचवर्षीय योजना	535

अभी हाल ही में लघु उद्योग विकास संगठन के एक सर्वेक्षण के अनुसार देश में इस समय पंजीकृत लघु उद्योग इकाइयों की संख्या 5 लाख है, जिसमें लगभग 1850 करोड़ रुपए की पूंजी लगी हुई है। सन् 1976 में इनका कुल उत्पादन 6700 करोड़ रुपये का था। कुल औद्योगिक उत्पादन में लघु उद्योगों का 40 प्रतिशत हिस्सा है, इन लघु उद्योगों में संगठित उद्योगों की अपेक्षा कहीं अधिक रोजगार क्षमता है। जहां 1971-72 में लघु उद्योग क्षेत्र का निर्यात 155 करोड़ रुपए था वहां बढ़ कर सन् 1976-77 में लगभग 400 करोड़ रुपए हो जाने का अनुमान है। इस प्रकार लघु उद्योग भारत के निर्यात व्यापार में अपना महत्वपूर्ण भाग अदा कर रहा है।

इस प्रकार लघु एवं कुटीर उद्योगों का अगर तेजी से विकास होगा तो रोजगार बढ़ेगा और विकेन्द्रित अर्थ व्यवस्था के निर्माण में सहायता मिलेगी। देश में उत्पादन के अभाव व बढ़ते हुए मूल्यों की समस्या का समाधान भी सम्भव होगा। आगामी योजना में ग्रामीण लघु उद्योगों के विकास पर ज्यादा ध्यान दिया जाएगा। ★

बालक्षेम प्राप्त करो।

★ हर गृहस्थ को इसकी जरूरत है।

★ कनारा बैंक की अजीबो-गरीब गृह बचत योजना।

★ अपने बच्चों में बचत की आदत डालने के लिए एक आकर्षक खिलौना जैसा टेलीविजन।

★ बैंक जाने की जरूरत नहीं, हमारी द्वार-संग्रह सेवा-उपलब्ध है।

★ यदि आप पैसा बचाओगे तो रुपया खुद-बखुद बढ़ता चला जाएगा

कनारा बैंक

(पूर्णतया भारत सरकार द्वारा अधिकृत)

हैड आफिस : बंगलौर-2

वृद्धि के लिए सेवा करते हुए :

सेवा के लिए बढ़ते हुए

कोड:-77590

मध्यप्रदेश में हाथकरघा उद्योग का विकास

राज्य सरकार ने प्रदेश में हाथकरघा बुनकरों की माली हालत को बेहतर बनाने के लिए एक बड़ा अभियान शुरू किया है। प्रदेश के बुनकरों में ज्यादातर लोग हाथकरघा से पूरे साल रोजी-रोटी कमाने में असमर्थ हैं। दलालों द्वारा उनका शोषण भी किया जाता है। दलाल बुनकरों को नुकसान भी पहुंचाते हैं यदि उनसे इनका मतलब पूरा नहीं होता। इसलिए सरकार का एक उद्देश्य यह है कि इन बुनकरों को पूरी आजीविका और दलालों के शोषण से मुक्ति मिले। सरकार का इरादा नए हाथकरघे लगाने का नहीं बल्कि बुनकरों की हालत सुधारना है।

हाल ही में स्थापित हाथकरघा निदेशालय ने तेजी से काम करना शुरू कर दिया है। उसने बुनकरों की आत्म-निर्भर सहकारी समितियां संगठित करने की ओर भी ध्यान दिया है। इन समितियों के जरिए बुनकर कच्चा माल खरीद सकेंगे और तैयार सामान की बिक्री का इन्तजाम भी होगा। निदेशालय ने 1976-77 में 81 और समितियां बनाई जिनकी सदस्य संख्या कोई 2,300 है। निदेशालय यह व्यवस्था भी कर रहा है कि इन समितियों को सहकारी बैंकों से उनकी अंश पूंजी और कार्यशील पूंजी की जरूरतें पूरी करने के लिए वित्तीय सहायता मिले। इसके अलावा वह समितियों को शेडों और डाईहाउसों के लिए मदद भी दे रहा है। निदेशालय के इन प्रयासों के फलस्वरूप सहकारी क्षेत्र में चल रहे करघों की संख्या पिछले साल काफी बढ़ी है। अब भी यह हर महीने बढ़ती जा रही है। हाथकरघा उद्योग में पहली बार बड़े पैमाने पर पूंजी लगाई गई है। निदेशालय ने पिछले माली साल में एक करोड़ 33 लाख रु० विभिन्न योजनाओं पर खर्च किए। इस वर्ष एक करोड़ 40 लाख रु० खर्च किए जाने का प्रस्ताव है। इस प्रकार पहले जहां हाथकरघा उद्योगों पर केवल 20 लाख रु० खर्च होता था, वहीं अब यह राशि सात गुना बढ़ गई है।

हाथकरघा उद्योग के विकास में राज्य वस्त्र निगम की भी महत्वपूर्ण भूमिका है। इस वर्ष जनवरी में उसने हाथकरघों का काम अपने हाथ में लिया और यह शुरूआत अच्छे पैमाने पर हुई। वस्त्र निगम ने अभी तक 2 हजार हाथकरघों को काम दिया है जिन पर 3 हजार से अधिक लोग लगे हुए हैं। यह संख्या सूती कपड़े के एक बड़े कारखाने में काम करने वाले कामगारों के बराबर है। मध्य प्रदेश में इसके किसी शासकीय अथवा अर्द्धशासकीय एजेंसी ने हाथकरघा बुनकरों को इतने बड़े पैमाने पर काम नहीं दिया था।

अब प्रदेश के हाथकरघा बुनकर अपने भविष्य के प्रति आशावान हैं। इनमें से अधिकांश लोग कुछ समय पहले तक अपने हाथकरघों के लिए थोड़े समय के लिए काम करते थे अथवा कुछ लोगों को बिल्कुल काम नहीं मिलता था। इनमें से बहुतों ने पिछले कुछ सालों से अपने हाथकरघों को छोड़ रखा था और वे या तो खेतिहर मजदूर बनकर गुजारा कर रहे थे या रोजी-रोटी कमाने के दूसरे साधनों की खोज में लगे थे। अब इन बुनकरों ने अपने पुराने व्यवसाय को फिर से अपना लिया है और इसके जरिए पर्याप्त आजीविका कमा रहे हैं। राज्य वस्त्र निगम उनको कच्चा माल दे रहा है और यह बता रहा है किस प्रकार का कपड़ा उन्हें बनाना है। इसके साथ वह उनको कपड़े बनाने के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण दे रहा है। निगम इन बुनकरों से उनके बनाए कपड़े उचित कीमत पर खरीद लेता है। छत्तीसगढ़ क्षेत्र में राज्य वस्त्र निगम की सामयिक सहायता से इन बुनकरों को काफी राहत मिली है। मौसम की प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण फसल को नुकसान पहुंचने से छत्तीसगढ़ के किसान और कामगार परेशान थे।

राज्य वस्त्र निगम द्वारा इन बुनकरों के संगठनों को सशक्त इकाइयां बनाने में मदद दी जा रही है। वास्तव में उन्हें इन संगठनों के माध्यम से काम दिया जा रहा है, ताकि ये लोग अपने पैरों पर

स्वयं खड़े हो सकें और दूसरे संगठनों के समान उनके संगठन भी स्वावलम्बी रूप से काम कर सकें। बुनकरों की कई नई समितियां बनी हैं और कई पुरानी समितियां भी, जो या बन्द हो गई थीं अथवा सहकारी बैंकों के भारी कर्जों से दबी हुई थीं, पुनर्जीवित हो रही हैं और अब एक नई आशा के साथ काम शुरू कर रही हैं। इनमें से कई समितियों ने राज्य वस्त्र निगम द्वारा दिए जा रहे काम से मुनाफा भी कमाया है। यह देखते हुए कि बहुत से हाथकरघा पुराने तरीके के हैं अथवा खराब हालत में हैं, राज्य वस्त्र निगम नए और सुधरे हुए करघे बहुत रियायती कीमत पर दे रहा है। बुनकर अब उतनी ही मेहनत से अधिक उत्पादन कर सकते हैं और पहले से बेहतर कपड़ा बना सकते हैं। निगम उन्हें ऐसी डिजायनें भी दे रहा है जिनकी बाजार में अच्छी बिक्री होगी।

महिला बंधाई-रंगाई का काम करते हुए

निगम ने निर्यात व्यापार की ओर भी ध्यान दिया है और वह मध्यप्रदेश में बने हाथकरघा कपड़ों को बाहर के बाजारों में स्थान दिलाने के लिए कृत संकल्प है। इसकी शुरूआत मध्यप्रदेश के प्रसिद्ध कोसा सिल्क के निर्यात से हो चुकी है। निगम ने बुनकरों को छोटे-छोटे समूहों में संगठित किया है। इन संगठनों में बुनकरों में से कोई एक मुखिया होता है। निगम उन्हें कच्चा माल दे रहा है। यह कच्चा माल आदिवासियों द्वारा जंगलों से इकट्ठा किया गया रेशम का कोया होता है। अब तकनीकी अधिकारियों के मार्गदर्शन में बुनकरों द्वारा तैयार किया गया अच्छे किस्म का कोसा मिलना शुरू हो गया है, जिसकी अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में खपत हो रही है। अधिकांश कपड़ा यूरोप जाता है। देश के कई प्रमुख निर्यातकर्ता निगम से बड़ी मात्रा में ये कपड़े खरीद रहे हैं। इन कपड़ों की गुणवत्ता और मांग को देखते हुए निगम अब स्वयं निर्यात व्यापार में प्रविष्ट होने का विचार कर रहा है ताकि बुनकरों को ज्यादा से ज्यादा मुनाफा और लाभ मिले।

जबलपुर स्थित शीर्षस्थ हाथकरघा बुनकर समिति ने भी हाथकरघा कपड़ों की बिक्री को बढ़ाने के लिए कदम उठाए हैं। वह विभिन्न समितियों द्वारा बनाए गए हाथकरघा कपड़ों के लिए बिक्री की सुविधाएं दिलाने पर ध्यान दे रही है। इस समिति को पिछले माली साल में बड़े पैमाने पर वित्तीय सहायता दी गई है जिसके आधार पर वह फुटकर बिक्री की नई दुकानें खोल रही है। निदेशालय इन समितियों को कपड़ा रंगने- सिले-सिलाए वस्त्र बनाने की इकाइयों वगैरह के लिए मदद दे रहा है। इससे पिछले सहकारी वर्ष में इस समिति की बिक्री आय में उल्लेखनीय बढ़ोत्तरी हुई है। ★

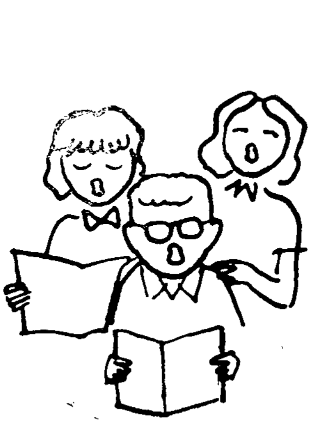

है तो मशहूर पर

इसके

बारे में कुछ और भी जानिए

मध्य प्रदेश स्टेट को-आपरेटिव मार्केटिंग फैडरेशन लिमिटेड़

हम अन्य राज्यों में सहकारी संगठनों के लिए निम्नलिखित खाद्यान्नों की पूर्ति द्वारा सेवा के लिए तत्पर हैं :-

1. गेहूं, ज्वार, मक्का, बाजरा जैसे खाद्यान्न,
2. दालें

अच्छी किस्म, उचित मूल्य और बिचौलियों से सुरक्षा की गारन्टी।

पूछताछ के लिए सम्पर्क करें :

व्यापार व्यवस्थापक
(विपणन)

मध्य प्रदेश स्टेट को-आपरेटिव मार्केटिंग फैडरेशन लिमिटेड़
भोपाल (म० प्र०)

पहला सुख निरोगी काया

रोगनाशक फल केला ✶ डा० आर० एन० सिंह

केला एक ऐसा स्वादिष्ट फल है जिसे गरीब-अमीर सभी किफायत और आसानी से सुलभ कर सकते हैं। जहां पोषण की दृष्टि से इसका बड़ा महत्व है, वहां इसे धार्मिक-विधि-विधानों और अनुष्ठानों में भी काम में लाया जाता है। स्वास्थ्य विशेषज्ञों की केला के बारे यह राय है कि इसमें पाई जाने वाली शर्करा इतनी जल्दी पचाई जा सकती है क उतनी जल्दी अन्य फलों की शर्करा को नहीं पचाया जा सकता। केले से प्राप्त शर्करा का 96 प्रतिशतसे 99 प्रतिशत तक शरीर में जज्ब हो जाता है। इसमें अन्य फलों की अपेक्षा केले का प्रति औंस कैलोरी माप अधिक होता है और शरीर के लिए कैलोरी प्राप्त करने का अच्छा साधन है। इसमें प्रोटीन, वसा और शर्करा के अतिरिक्त खनिज लवण जैसे—कैलशियम, गंधक, लोहा, तांवा, जस्ता कोबाल्ट एवं फासफोरस शत प्रतिशत तकपाया जाता है।

दवा दारू में उपयोग

आयुर्वेदिक दृष्टि से केला शीतल, भारी, वीर्यवर्धक स्निध मधुर, पित, उदर विकार, योनि दोष, पथरी तथा रक्त पित नाशक है। यह नेत्र रोग, प्रमेह, रक्तासार और दर्द नाशक है।

केले के पके फल को भूभल में भून कर खाने से रक्तपित और तपेदिक का नाश होता है। केले के बीजों का चूर्ण चेचक की राम-बाण दवा है। यह ज्वर नाशक भी है। कहा जाता है कि उक्त चूर्ण को आठ रत्ती की एक मात्रा पूर्ण वयस्क व्यक्ति को देने से एक वर्ष तक चेचक निकलने का भय नहीं रहता। इस के सेवन से खतरनाक ज्वर भी शान्त हो जाता है। केले की डांडी का रस विष नाशक है और विष पान करने पर इसके सेवन से विष उतर जाता है। आसन्न प्रसवा नारी की कमर में केले की जड़ बांधने से प्रसव आसानी से हो जाता है और कोई कष्ट नहीं होता। वनकदली की राख मधु के साथ चाटने से हिचकी शान्त हो जाती हैं। उपदंश रोग में भी केला बड़ा हितकारी फल है। केले की डांडी का चूर्ण शर्करा और पानी के साथ देने से उपदंश का रोगी स्वस्थ हो जाता है। केले के फल का गूदा 6 मासे, इमली एक तोला और सेंधा नमक डेढ़ मासे इन तीनों को मिला कर पीस लें और दिन में दो बार दें। यह योग आमातिसार: संग्रहणी तथा अन्य प्रकार के दस्तों में रामबाण है।

केले के पत्तों को जला कर क्षार तैयार किया जाता है। यह क्षार तपेदिक ज्वर तथा दाह को नष्ट करता है। केले का तेल भी तैयार किया जाता है। छिलका उतार कर पके केले को रेक्टीफाइड स्प्रिट से भरी बोतल में डाल दें और उसका मजबूती से कार्क बन्द कर दें। आठ दिन बाद देखने पर तेल स्प्रिट पर तैरने लगता हैं। इस तेल को यत्न पूर्वक निकाल कर शीशी में रख लिया जाता है। इस तेल में केले की सी गंध आती है। इसे चेचक के जख्मों पर लगाने से जख्म ठीक हो जाते हैं।

डा० आर० एन सिंह
आयुर्वेदिक डिस्पैंसरी,
गोल मार्केट

कांटों पे चलना

राज प्रभाकर

कड़े सिद्धांत हैं जितने,
हमारे दर्शनों को खान से निकाले।
तपस्या की कुदालों से
ऋषियों के गम्भीर चिन्तन से,
ये सच्ची सोच के
सच्चे सुनहरे हीरे मोती हैं
जमाने आते रहते हैं
जमाने जाते रहते हैं
मगर आभा घटती नहीं इनकी,
इसी आभा को जग-मग में
जो राहें गांधी बाबा ने
हमारे वास्ते खोजी, निकाली थीं
इन्हीं राहों पर चलना है
हमें बाबा के सपनों को
हकीकत में बदलना है
मगर ऐ देश के लोगों
हमीं जनता
हमीं राजा, प्रजा हम ही,
मुसाफिर है हमीं फूलों की मंजिल के
अभी कांटों पे चलना है
हमें गाँधी के सपनों को
फिर हकीकत में बदलना है।

'—बी-58, पंडारा रोड,
नई दिल्ली-1100०3

दो वर्षों में हमारे निवेश और लाभ दुगुने हो गए और इस तरह हमारे वायदे भी बढ़ गए हैं। न सिर्फ अधिक ब्याज कमाने के लिए बल्कि ग्रामीण विकास की गति को तेज़ करने के लिए अपनी बचत को हमारे पास रखो।

- धन बढ़ाने की योजना के अन्तर्गत 33.47% तक ब्याज प्राप्त करो।
- सात साल तक हमारे पास प्रति मास 100 रु० जमा करो और बाद में पाँच वर्ष तक 100 रु० प्रति मास की पेन्शन वापिस लो और इसके उपरान्त 12,500 रु० की ग्रेच्युवटी भी लो।
- सावधिक निवेशों पर ब्याज और ऋण की मासिक अदायगी की सुविधाओं का फायदा उठाओ।

निवेश की दर :

बचत बैंक और (काल) निवेश	5¼% प्रतिवर्ष
सावधिक निवेश	6¼ से 10¼ के दर से प्रतिवर्ष
संस्थानों के कर्मचारियों के लिए भविष्य निधि, पुनरावर्ती निवेश योजना	9¼% प्रतिवर्ष
पुनरावर्ती निवेश योजना	6 से 10% प्रतिवर्ष

ब्याज की दर इस बात पर निर्भर है कि शीघ्र और उदार सेवा के लिए आप कितनी राशि जमा करते हैं और कितने समय तक उसे रखते हैं।

हरियाणा राज्य सहकारी बैंक लिमिटेड

बैंक स्क्वायर, सेक्टर—17-बी, चण्डीगढ़

दूरभाष : 22178 : 29059
28253 : 22283
22284

जे. एस. चौहान
मैनेजिंग डायरेक्टर

रूपक

पीपल नीचे चाँदनी ★ 'चन्द्र दत्त इन्दु'

(गांव की बैठक। कुछ लोग बैठे बातें कर रहे हैं।)

मास्टर रामलखन : काका, लगता है, इस बार पूरे गाँव में आप की बैठक ही बाजी मार ले गई।

काका : यह क्या तुरफ मार दी मास्टर जी। बैठक ने कौन-सी घुड़दौड़ की, जो बाजी मार ले गई।

लछमन : काका, मास्टर जी की कुछ न पूछो। आजकल यह नेतागीरी के चक्कर में हैं। हर बात ऐसी हेरफेर से कहते हैं कि बस...

मास्टर जी : ऐसी तो कोई बात नहीं भइया। स्कूल से रिटायर्ड हो गया। और कोई काम नहीं, तो जनता की सेवा कर ही सकता हूं। यह नेतागीरी कैसे हुई ?

लछमन : पहले बैठक वाली बात साफ करो, तो मैं अपना बयान दूं।

मास्टर जी : बड़े चतुर हो। आखिर बेटे भी तो तिलकराम के हो। बैठक वाली बात तो सीधी सादी है। तुम जानते हो, इस बार बारिशें भरपूर हुई हैं। घटा-टोप पानी बरसा है। बरसा ने गांव के मकानों की क्या दशा बना दी। कच्चे मकानों को छोड़ो। अच्छे-अच्छे मकान भी चू गए। और तो और। दिलावर सिंह की हवेली भी इस बार चू गई। मगर मैं देख रहा हूं काका की बैठक की दीवारों पर पानी का निशान तक नहीं। इसी से बाजी मारने की बात कह रहा था।

काका : यह तो तुम सवा सोलह आने ठीक कहते हो भइया। बात यह है कि मैंने छत पर चूने का पलस्तर कराया है। चूने की चिनाई तो जग विख्यात है।

मास्टर जी : ठीक बात। इसीलिए मजबूती बढ़ गई। इसका मतलब है, गांव वाले भी अब मजबूत मकान बनाने की बात जान गए।

लक्षमन : मास्टर जी, मकान की बात नहीं, मजबूती की हर बात हमको जाननी चाहिए। गांव मजबूत न होंगे, तो पूरा देश कैसे मजबूत होगा।

मास्टर जी : काफी समझ बूझ गए हो लक्षमन। तुम जैसे युवक सही बात समझ जाएंगे, तो गांव जरूर मजबूत होंगे। देश के विकास की नींव तो गांव के विकास के ऊपर ही जम सकती है। सच पूछो तो एक बात कहूं।

काका : एक क्यों, दो कहो।

मास्टर जी : बात यह है काका। तुम्हें याद होगा। देश आजाद हुआ, तो गांधी जी ने सबसे पहले ग्रामराज की बात कही थी। मगर गत वर्षों में देश को तकनीकी ढंग पर बढ़ाने की ऐसी चाल चली कि ग्राम विकास का असली ढांचा ही बिगड़ गया। गांवों में सरकारी मशीनरी तो फैल गई, मगर हुआ कुछ नहीं।

काका : असल में गांधी जी की बात को समय से पिछड़ी समझ कर भुला दिया गया। देश के पिछड़ेपन को जिस तरह बढ़ाने की जरूरत थी, नहीं हुआ। ठीक उसी प्रकार हुआ, जैसे पेट के मरीज को, कान के दर्द की दवा दी जाए।

लक्षमन : वाह, मिसाल तो गजब की दी। आपने एक बात सुनी है।

मास्टर जी : क्या ?

लक्षमन : अंधा गाए-बहरा बजाए-ताल कहां से आए।

मास्टर जी : (हंसकर) खूब कही। मगर उल्टी कही।

लक्षमन : उल्टी कैसे ?

मास्टर जी : सुनो ऐसे-बहरा गाए-अंधा बजाए ताल कहां से आए। अरे भाई तभी तो बात जमती है।

लक्षमन : सचमुच गलती हो गई। इसीलिए गुरुओं की हर जगह जरूरत पड़ती है।

काका : मगर चेले गुरु बन जाएं तब।

लक्षमन : तभी तो बहरे-अंधे वाली मिसाल कायम होती है। अब तक देश में यही तो हुआ।

काका : और अब क्या है ?

लक्षमन : अभी तक हुआ तो कुछ नहीं, मगर होने की पूरी उम्मीद है। नयी सरकार की गांधीवादी रीति-नीति से उम्मीद बंधी है कि सही ढंग से गांव विकास की दिशा में शीघ्र कदम उठाए जाएंगे।

मास्टर जी : न उठेंगे, तो नयी सरकार फिर जनता सरकार कहां रहेगी।

काका : तुम्हारी बात ठीक है। समय अपना असर दिखाता है। मुझे लगता है, समय बदलने की बारी आ गई है। इसीलिए जनता सरकार आई। वरना देश में जो माहौल था, उसे बदला जाने की किसे उम्मीद थी। सब कुछ अचानक ही हुआ न।

मास्टर जी : हुआ और जोरदार तरीके से हुआ। यूं समझो जैसे भारत मां ने अपने हाथों में पड़ी निरंकुशता की हथकड़ियों को झनझनाकर तोड़ डाला।

लक्षमन : इसमें तो जरा भी शक नहीं मास्टर जी। बस यूं समझो, मुकद्दर से ही जाती-जाती आजादी वापस

लौटी है।

काका : क्यों भइया। अपने आप कैसे लौटी। इसके लिए भी कम संघर्ष नहीं हुआ। स्वतंत्रता का हक मांगने वालों या निरंकुशता का विरोध करने वालों के साथ जो हुआ, क्या उसकी गाथा तुम समाचारपत्रों में नहीं पढ़ते।

मास्टर जी : ठीक कहते हो काका। भारत में अभी लोकतंत्र की जड़ें हिली नहीं। लोग स्वतंत्रता की कीमत जानते हैं, इसीलिए तख्ता पल्टा। भारत माता, फिर भारत माता बन गई, वरना तो इंडिया इज...

लक्षमन : सुना है, कल रामदीन चौधरी दिल्ली से आए हैं। पता नहीं, क्या खोज-खबर लाए।

काका : भई, अब चौधरी और पंडित दाताराम बड़े आदमी हो गए हैं। उनकी खोज-खबर मुश्किल है। दिन-रात भाग-दौड़ में लगे रहते हैं। एक पांव गांव में तो दूसरा शहर में, मिलना भी कैसे हो।

मास्टर जी : अपने क्षेत्र के लोकसभा के सदस्य उनके जान-पहचान के हैं। उनके चुनाव में इन लोगों ने जी तोड़ मेहनत की थी। उनके पास आते-जाते हैं। विधान सभा में तो पंडित जी का खास रिश्ते दार है।

लक्षमन : अच्छा है, इलाके में एक-दो ऐसे हों। पता नहीं, कब वहां गाड़ी अटक जाए। ये काम तो आते हैं।

मास्टर जी : फिर वही बात। यही गलत है। नेताओं से जान-पहचान वाली गलत नहीं, मगर काम आने का धंधा ही गंदा है। इसी चक्कर में तो पहले गड़बड़ घोटाला हुआ।

लक्षमन : क्यों, नेताओं का काम लोगों की परेशानी हल करना नहीं क्या ?

मास्टर जी : क्या नेता इस बात को नहीं जानते। उन्हें अपना काम करने दो। आप अपना काम करो। इस तरह नेता लोग एक-एक की परेशानी हल करने में लगेंगे, तो पूरे राष्ट्र के वे जरुरी काम रुक जाएंगे, जिनसे करोड़ों लोगों को लाभ पहुंचने वाला है। अपनी समस्याओं को हमें मिलकर ही हल करना चाहिए। अभी सामुदायिक विकास की बात हम कर रहे थे। उसका मतलब यही तो है-एक संगठन में रह कर समाज की भलाई के लिए समाज से साधन जुटाकर काम करें।

काका : अरे, वाह भगवान नाम लेकर तूने बड़ा अच्छा किया। मुझे एक बात याद आ गई।

लक्षमन : अच्छा-जरा मैं भी सुनूं कौन-सी बात। इसका मतलब है भगवान ने काका की अक्ल से अंधेरे का परदा हटा दिया।

काका : भइया, भगवान की महिमा को क्या कहें, यह क्षण भर में क्या कर दे। मेरी अक्ल से परदा हटा दिया तेरी पर गिरा दिया।

(तीनों हंसते हैं)

मास्टर जी : यूं कहो लछमन की अक्लबंद हो गई।

काका : मगर अक्ल बंद का अर्थ तो कुछ और भी होता है-अक्लमंद कहना ठीक है।

लक्षमन : देखा, मास्टरजी, काका भी इल्मी है।

काका : अब इल्मी कहो या फिल्मी, मगर काका तो काका है। न होते तो तुम काका क्यों कहते।

लक्षमन : मान गए। अब बता दो क्या भूला याद आ गया।

काका : तुम्हें अभी ध्यान नहीं आया क्वार के महीने में क्या क्या होता है।

लक्षमन : होता क्या-गेहूं के खेतों की जुताई होती है।

काका : तब तो ठीक है, तेरी अक्लमंद हो गई भइया। माना किसान को खेत की याद रहती है, मगर कुछ और भी तो जरुरी है।

मास्टर जी : अब लो काका ने उलझा दिया। मानों गुरु इन्हें। सवा रुपया और पगड़ी रखो, तभी काका गुरु ज्ञान बताएंगे।

लक्षमन : मास्टर जी, काका को मैं जन्म से ही अपना गुरु मानता हूं पगड़ी क्या, मेरा सिर काका के चरणों में है। आज्ञा दें।

मास्टर जी : काका, लड़का तो चारों खाने चित्त हो गया। अब खोलो अपनी ज्ञान गुदड़िया।

काका : अरे, मेरे जैसे 'चौदह दुनी आठ' पर क्या ज्ञान गुदड़िया रखी है। मेरा मतलब था, क्वार का महीना तीन त्यौहारों का मेले ठेलों का महीना होता है ना।

मास्टर जी : खूब याद दिलाया। रामलीला भी तो इसी महीने में होती हैं।

काका : अब समझे। उसी की तो बात कह रहा था। इसी बहाने भगवान की याद आ जाती है। इस बार गांव में अभी तक राम लीला का जुगाड़ नहीं बैठाया। लछमन हमेशा आगे रहता था। इस बार भी यह चक्कर में उलझा लगता है।

लछमन : गलत बात काका। लछमन को कोई चक्कर नहीं। मैं तैयार हूं। आप दिलावरसिंह से कह दो। वह तैयार हो जाए, तो कल से ही रामलीला शुरू समझो। पूरी चौकड़ी तैयार है।

काका : भइया, भगवान दिलावर सिंह की उम्र बढ़ाए। धर्म-कर्म के काम में वह कभी पीछे नहीं हटता। जैसा नाम वैसा गुण। भगवान ने दिया है, तो वह भी देने में कमी नहीं छोड़ता। सच पूछो तो, गांव की रामलीला उसी के बलबूते पर होती है। मैं आज ही उसकी हवेली पर जाऊंगा।

मास्टर जी : इस काम में तो पूरे गांव का सहयोग लेना चाहिए।

काका : क्यों नहीं, गांव साथ न होता, तो कैसे काम

चलेगा। इस बार आपको भी एक जिम्मेदारी लेनी है ?

मास्टर जी : वह क्या।

काका : हमारे मुंशी कृपाराम मुनि वशिष्ठ का पार्ट खेला करते थे। वह स्वर्ग सिधार गए। अब आप यह भार संभालिए।

मास्टर जी : क्या मुझे भी स्वर्ग भेजने का इरादा है।

(तीनों हंसते हैं)

मास्टर जी : अच्छा काका। आज की गोष्ठी समाप्त। रात को दिलावरसिंह की हवेली पर मिलेंगे। त्योहारों को तो मनाना ही चाहिए।

काका : बिलकुल ठीक, तू भी आना लछमन।

लछमन : नाम लछमन, पार्ट मेघनाथ का क्या कमाल है। काका, आपकी बात न मानूंगा, तो लंका में कैसे रहूंगा। जरूर आऊंगा। अच्छा काका राम-राम।

—दृश्य परिवर्तन—

द्वितीय आवरण

दिलावरसिंह : पां लागू पंडित जी। अरे, चौधरी साहब आप भी। आइए-आइए। कैसे रास्ता भूल आए ?

मास्टर रामलखन : मैं भी रास्ता नापकर आ पहुंचा।

दिलावरसिंह : मास्टर जी। आप भी धन्य भाग्य मेरे आज, आप जैसे सज्जन मेरी झोंपड़ी पर पधारे।

काका : भइया मुझे भी शामिल कर लेना इन सज्जनों में।

दिलावरसिह : वाह काका भी आ गए।

पंडित दाताराम : क्यों दिलावरसिंह जी, लखपतराय जी आपके काका कैसे हो गए। आप दोनों तो लंगोटिया यार हैं।

दिलावरसिंह : पंडित जी, पूरा गांव इन्हें काका कहता है, तो क्या मैं गांव से अलग हूं। वैसे भी हमारी पंचायत के ये प्रधान हैं। इस रिश्ते में भी ये हमारे कानूनी काका हैं।

चौधरी : भई वाह। यह कानूनी रिस्ता खूब रहा। तब तो लखपतराय आज से मेरे भी काका बन गए।

काका : क्यों मुझे शर्मिदा करते हो चौधरी साहब। आप मुझसे बड़े हैं। उम्र में भी और इल्म में भी। भगवान् ने आपको शोहरत बख्शी है। बड़े-बड़े लोगों के पास आपकी बैठ-उठ है। मैं गांव का गंवार।

चौधरी : देखो लखपतराय। गलती क्षमा करें—लखपतराय नही काकाजी गांव का प्रधान, सबका बड़ा। गांव में मैं भी रहता हूं। जो गांव के कानून को न माने, उसे गांव में रहने का हक क्या। फिर हमने मिलकर आपको प्रधान चुना है। हम इज्जत न करेंगे तो कौन करेगा।

पंडितजी : यह बात बिलकुल ठीक है। उम्र की छोटाई-बड़ाई दूसरी बात है। यह फैसले की बात है। लोकतंत्र में चुने हुए प्रतिनिधि भाग्य बनाते हैं। काका भी गांव के प्रधान हैं। गांव की बागडोर इन्हीं के हाथों में है।

(पीछे से लछमन आता है)

लछमन : सबको मेरी राम-राम पंडित जी को चरण छूना। लगता है बड़े काम की बात हो रही है।

दिलावरसिंह : हां, जहां चार भले लोग इकट्ठा होंगे, काम की बातें होंगी ही।

लछमन : माफ करें, इन चारों में आप भी सम्मिलित हैं क्या ?

दिलावरसिंह : पहले था, अब तुम आ गए तो अपना नाम वापस ले लेता हूं।

(सब हंसते हैं)

काका : देखो लछमन। अपने दिलावरसिंह का दिल कितना बड़ा है।

चौधरी : अब तो बड़ा दिल रखने से ही काम बनेगा। सच्चे सहयोग का रास्ता सहानुभूति से ही निकलता है।

काका : मास्टर जी, आपकी बातें बड़े काम की हैं। इनसे तो कोई इन्कार नहीं करता, मगर कथनी-करनी में बड़ा अन्तर होता है।

मास्टर जी : एक बात बताओ। आपके घर में सत्यनारायण की कथा होती है। घर के बाहर कई गाड़ी कूड़ा पड़ा सड़ रहा है। आसपास कीचड़ भी है। बोलो, पहले उसे साफ करोगे या ऐसे ही दावत और कथा करने लग जाओगे।

ककाा : पहले तो कूड़ा ही साफ करना पड़ेगा। कीचड़ रहेगी, तो आने जाने वाले के पैर सनेंगे। गंदगी की पहले सफाई वैसे भी जरुरी है।

मास्टर जी : तो बात साफ हो गई।

काका : समझा नहीं।

मास्टर जी : काका, यही हालत नयी सरकार की है। पहले फिरका परस्ती, कुनबापरस्ती और चमचापरस्ती का इतना जोर था कि देश में बुराइयों के कूड़े लगे हैं। भ्रष्टाचार की कीचड़ से दुर्गन्ध फैली हुई है। पहले इस कूड़े को हटाना होगा, तभी नए सिरे से ठीक काम हो सकेगा। जुम्मा-जुम्मा आठ दिन होते हैं। 30 वर्षो की की गंदगी 30 महीनों में भी नहीं हट सकती। मगर एक बात साफ है।

काका : वह क्या।

मास्टर जी : नयी सरकार की लगन और ईमानदारी में किसी को शंका नहीं। क्या आपको है।

काका : शंका तो बिलकुल नहीं। भय भी नहीं। मगर काम की रफ्तार धीमी जरुर है।

मास्टर जी : धीमी नहीं है। वही तो मैं कह रहा था। रफ्तार

तो तेज है, मगर उस हवा को हम तक पहुंचने में देर लग रही है। कारण यही है कि हवा के आने के लिए खिड़की खोलनी पड़ेगी।

काका : तब कैसे चलेगा। ऐसे तो समय लगेगा। देखा नहीं, मंहगाई बढ़ रही है।

मास्टर जी : आप देख नहीं रहे। प्रधान मंत्री ने कितनी बार व्यापारियों से अपील की है कि वे कीमतें कम करें, मगर इनके कानों पर जूं नहीं रेंगी। शराफत से न मानने वालों का जो इलाज होता है, वही इनका होगा।

लक्ष्मण : यानी इन्हें कानून से सही किया जाएगा। मगर कानून अब तक कहां बैठा रहा ?

मास्टर जी : अब तक सामाजिक कानून का प्रयोग चल रहा था। इंसानियत का तकाजा है कि पहले समझा-बुझा कर सुधार करना चाहिए। वरना भइया डंडे की मार से तो बड़े बड़े भूत ठीक हो जाते हैं।

काका : अब समझा-हां, यह तो ठीक ही हुआ। अपील न होती, तो इनकी असलियत कसे पहचानी जाती।

लक्ष्मन : अजी, परहित की बात तो आज आदमी के लिए जहर हो गई है। मगर भगवान के घर देर है, अंधेर नहीं। सब ठीक हो जायेगा।

लछमन : गलती क्षमा हो, तो एक बात कहूं।

दिलावर सिंह : जनता के दरबार में गलती क्षमा ही होती है, तुम कह डालो।

लछमन : सहयोग हो कैसे ? पहले गांव में मेले-ठेले होते थे। साँग तमाशे होते थे। सब लोग मिलकर तीज-त्यौहार मनाते थे। हँसते गाते थे। अब सब अपनी-अपनी ढपली पर अपना-अपना राग बना रहे हैं। क्वार का महीना बीता जा रहा है।

पंडित जी : चोट गहरी है। लछमन ने बड़े राज की बात कही है। कुछ समझे दिलावर सिंह। गांव की रामलीला तो तुम्हीं करते हो। इस बार क्या सोचा है।

दिलावर सिंह : सोचा क्या है रामलीला होगी। जन्माष्टमी पर कृष्ण लीला भी होती पर मैं बीमार हो गया, क्या करूँ, वरना ब्रज की मंडली से बात तय हो चुकी थी। इस बार सोचता हूं गांव में दीवाली भी जोरदार होनी चाहिए।

काका : क्यों नहीं, जनता राज की पहली दिवाली। उजाले की अब हर घर को जरुरत है।

चौधरी : ठीक ही कहा-महलों में बंद रोशनी को अब झोंपड़ियों में लाना होगा।

दिलावर सिंह : तब शुरूआत अभी हो जाए।

चौधरी : अभी हो जाए-वह कैसे ?

दिलावर सिंह : असल में आप लोगों को बुलाने वाला था। यह मेरा सौभाग्य ही है कि आप खुद आ गए। मैंने मौजी को बुलाया है।

मास्टर जी : अरे, रागनी वाले मौजी राम।

दिलावर सिंह : बिल्कुल ठीक कहा आपने।

मास्टर जी : भई, उस आदमी की आवाज में जादू है।

दिलावर सिंह : आजकल चाँदनी रात है। मैंने आप लोगों के लिए पिस्ते की खीर बनवाई है। आज के इस कार्य-क्रम का असली आनंद चाँदनी रात को कुछ देर के लिए छत पर रोकना ही है। इसके बाद खीर की दावत होगी।

पंडित जी : भई, खीर की बात कहकर तुमने मुझे भी रोक लिया। वरना सोने की सोच रहा था।

मास्टर जी : फिर देर क्या - चला जाए छत पर। मौजी राम कहां हैं।

दिलावर सिंह : वह अपनी पार्टी के साथ वहां पहले से ही मौजूद है। चलो चलते हैं।

(दृश्य परिवर्तन)

(मौजीराम सारंगी पर रागनी छेड़ता हुआ)

पीपल नीचे चांदनी रे।
जैसे रस की पड़ी फुआर
चलो, संग-सात में—
धरती नहाई ओस से रे।
जैसे पनघट की हो घास
तनिक रस डार दो।
राम उजाला दे रहा रे
फिर क्यों घर में अंधियार
उजाला बांट दो।

पंडित जी : वाह भई दिलावर राम के पीपल नीचे भी चांदनी छिटकी है। राम ने सचमुच ही भरपूर उजाला दिया है, फिर अंधेरा क्यों रहे। मौजीराम जी आज धन्य हैं। देश प्रेम का संगीत छेड़कर सोई भावना जगा दी आपने।

दिलावर सिंह : अब खीर का प्रोगराम चलेगा न।

काका पहले एक प्रतिज्ञा करनी होगी।

लछमन : वह क्या ?

काका : खीर बेकार न जाए। मौजीराम की रागनी सच्चे मायने में उजागर हो और पीपल की चांदनी भी घर-घर में फैल जाए।

चौधरी : भई, तुम गांव के प्रधान हो, जैसा चाहोगे, हम तैयार हैं, इसमें पूछने की गुंजाइश कहां है। लछमन जैसा चेला तुम्हारे पास है, यह तो इस गांव का हनुमान है। हर मुसीवत के पहाड़ को उठाता है।

लछमन : मगर चौधरी साहब, रामलीला मैं तो मुझे मेघनाथ ही बनना है।

मास्टर जी : तो क्या हुआ, तुझे एतराज न हो तो इस बार रावण मैं बन जाऊं।

(सब खिलखिलाकर हंसते हैं)

कहानी

गहरी नदिया ★ श्रीराम शर्मा 'राम'

वर्षा बीत गई थी। खेतों में बहार आ रही थी। दो खेतों के मध्य बनी डौल पर बैठे हुए संगरू ने मंगरू की ओर देखा। तभी अपना नारियल उसकी ओर बढ़ा दिया। तदनन्तर बोला, 'मंगरू भाई, एक बात कहूं, मानोगे ?' देखो, तुम्हारा लड़का है और मेरी लड़की··· जब हमारे खेत से खेत मिले हैं, घर से घर भिड़े हैं, तब क्यों न इन दो प्राणियों को एक हो जाने दो। 'अपनी बात कहने के साथ ही मंगरू ने सांस भरी—'मंगरू, यह बात रात मुझे लड़की की मां ने सुनाई थी। शायद कल दिन में औरतों में बात चली होगी। और यह तो तुम जानते हो, औरत के पेट में आई बात कभी पचती नहीं।'

मंगरू मुसकराया—'कही-सुनी बात आदमी भी नहीं पचा पाता। वह बोला—'मैं तो इस गांव में अभी आकर वसा हूं। तुमसे सम्बन्ध बने, तो यह मुझे अशुभ नहीं लगेगा। यह देख लो, ये दो खेत हैं। इनसे ही घर का गुजारा चलता है।'

संगरू ने नारियल ले लिया। अभी चिलम में तम्बाकू बाकी था। वह दम लगाकर धुआं छोड़ता हुआ बोला—'इस धरती ने हम सभी को उबारा है, भैया। इसी का सहारा है।

किन्तु मंगरू ने अपने मन की बात कही—'मैं लड़के को शहर भेजना चाहता हूं।' उसका मामा एक कारखाने में लगा है। दो सो रुपये माहवार पाता है। वह जब तब आता है तो छैल-चिकनिया बना रहता है। कहा न किसी ने, आदमी का खसम पैसा है। जैसे औरत का खसम आदमी, औरत बेचारी भी आदमी का सहारा लेती है, हँसती है और जिन्दगी का सोहाग मानती हैं। अब इन खेतों में कुछ पैदा नहीं होता। गुजारा भी नहीं हो पाता।

परन्तु लगा कि संगरू उस बात से सहमत नहीं था। वह कुछ पढ़ा-लिखा भी था। भाग्यवाद के साथ इन्सान के पौरुष और विवेक को भी मानता था। अतएव, वह बोला—'मगरू भैया, शहर में पैसा तो है परन्तु उसके खर्च के रास्ते भी अनेक हैं। अनेक कुटेव लग जाते हैं, उस शहराती को। इसलिए वहां शान्ति नहीं। जब आदमी बहुव्यसनी बनता है तब भला उसका कहीं और ठिकाना है। देखा न हरखू को, तीन-चार सौ रुपये माहवार कमाता है। शहर में, लेकिन शराब, जुआ, सिनेमा सरीखे व्यसन भी उसे लगे हैं। सदा कर्जदार बना रहता है। सूखकर ढांकर बना है।'

सुनकर, मंगरू ने सांस भरी—'हां यह दुर्गुण तो शहर में लगते हैं। ये विषैले सांप तो अब गांव में भी फुंकार करते हैं। यहां गांव में लोग शराब बनाकर पीते हैं। दूसरों को बेचते हैं। अब गांव भी नर्क बने हैं।' वह बोला—'भैया कोई अन्तर नहीं रह गया है। शहरों और गांवों में। रात की बात तो सुन ली होगी तुमने।'

संगरू ने नारियल खेत की डौल पर रख दिया था। उसका तमाखू जल चुका था। मंगरू की बात सुनते हुए, वह स्वयं ही विषाक्त बन चला था। फलस्वरूप, उसके अन्तर में जहरीला धुआं घुटा था। निःसन्देह गांव की अवस्था से वह भी परेशान था। परन्तु वह छोटी वित्त का आदमी था। गांव में ठाकुरों का बाहुल्य था। ब्राह्मण, वैश्य भी अपना महत्व रखते थे। इसलिए जब किसी छोटी जाति के साथ दूराव या उपेक्षा का व्यवहार किया जाता तो वह मन में कुढ़ता था। तब उसका मानस सुकड़ता। फलस्वरूप वह, प्रायः सोचता, भगवान कोई हो तो हो, इस वसुन्धरा पर इन्सान ही भगवान है, इन्सान ही शैतान है······'

मंगरू बोला···पानी का कुंआ सभी का है। धरती माता की कोख से पानी निकलता है। तब भला बड़ी जाति या छोटी जाति, उस पानी के लिए दुराव किस प्रकार किया जा सकता है···लेकिन यह मगरूर इन्सान भगवान की सत्ता में भी अपना दखल करता है।' उसने कहा, 'कल कुंए पर आकर ठाकुर के लड़के ने उस चमारी का घड़ा तो फोड़ा ही, उसे अपमानित भी किया।'

संगरू बोला—'सारे चमार थाने में गए हैं।'

'अजी, वहां क्या होगा।' मंगरू ने उपेक्षा दिखाई—'वहां भी कौम परस्ती और पैसा चलता है। निरीह, बेबस इन्सान के लिए भला धरती का कौन-सा टुकड़ा बचा है कि वहां चैन से बैठे और अपनी जिन्दगी का निर्वाह करे।'

संगरू ने सांस भरी—'बात तो ठीक है, तुम्हारी।' वह अपनी बात पर आया—'तो मेरी बात तुम्हें स्वकीर है, लड़की लेने की।'

'मंगरू बोला—'अच्छा वह विवाह की बात। तुम मालिक हो, जैसा चाहो, करो। लड़का तुम्हारा है। मेरी गरीबी तो तुम देखते हो।'

संगरू मुसकराया—'चने का टोरा चने में मिलेगा, गेहूं में नहीं। गरीब की लड़की मालदार केघर नहीं जाएगी वह बोला—'तो बात पक्की रही। या घरवाली से सलाह करोगे ?'

मंगरू ने कहा—'बात पक्की।' जब चाहे कर लो।'

संगरू ने रुपया उसके हाथ पर रखा—'अब मेरी लड़की तुम्हारे घर की बहू हो गई, समझो।

मंगरू ने कहा—'रिश्ता पक्का।'

यूं एक सामान्य बात गांव में फैल

गई। संगरू की लड़की देवकी मंगरू का लड़का हरजस जब अगले दिन खेत पर मिले, तो परबस देवकी अपने भीतर को देखकर शरमा गई। उसने अपना मुंह गले में पड़े दुपट्टे से ढक लिया। तभी पास आकर हरजस बोला 'हरे, तू एक ही रात में बदल गई, देवकी। देख तो, खेत में किस तरह सरसों में फूल आई है, वह आम की डाल पर बैठी कोयल कूक रही है बसन्ती ब्यार चल रही है। उसी तरह तो एक तू···हां, देवकी। तेरा यह यौवन भी सुगन्ध फैला रहा है।'

देवकी ने अपनी सुरमई आंखें तेरेरी—'देखो, कोई आ जाएगा। तुम जाओ, अपने खेत में। मुझे भी चारा काटना है।'

किन्तु हरजस भौंरे की तरह उस देवकी के चारों ओर उड़ने के लिए मचल रहा था। वह उस स्थान से जाने को तत्पर नहीं था। तभी सहसा, देवकी सहम गई। पास आई सुखिया ने उन दोनों को जब पास-पास खड़े देखा, तो वह बोल पड़ी—अरे, हल्दी चढ़ी, न बारात चढ़ी और तुम दोनों इतने निर्लज्ज बन गए रे। मैं तो जानती थी कि मंगरू ने क्यों दोस्ती की तेरे बाप से। चलो, अच्छा हुआ, पानी में पानी मिला, कीच में कीच···'

देवकी उस सुखिया की बात सुनते ही तड़प उठी। तुम्हारी बात का क्या मतलब है, ताई।'

ताई ने कहा—'अरी, तू कल की छोकरी क्या जाने इन बातों को। अभी-तो जवानी की दहलीज पर आकर चढ़ी है। देखकर चल, नहीं तो ठोकर खा जाएगी। और कहते ही वह आगे बढ़ चली।

सुखिया प्रौढ़ा थी। जो बात उसने खेत के डौले पर कही, वह छुपी नहीं रही। पुरवे भर में फैल गई। जब शाम आई, संगरू के कानों में भी वह बात पड़ी, तो वह इतना तैश में आया कि घर में से लाठी निकाल लाया। वह सुखिया के द्वार पर जाकर चीख उठा—'अरी ओ, सुखिया। निकाल अपने आदमी को। अब बता तू, क्या कह रही थी, मेरी लड़की से।'

किन्तु सुखिया भी कच्ची गोली नहीं खेली थीं। उसका आदमी शरीर से भले ही बलिष्ठ न हो, परन्तु चालाक था। गांव के ठाकुरों में अधिक बैठता-उठाता था। उसका काम ही यह था कि गांव में कहीं झगड़ा हो, थाने-कचहरी का मामला बना हो, तो वह झूठी गवाही देकर पैसा कमाता था। वह शराबी और जुआरी था। जब संगरू का तीखा बोल उसके कानों में पड़ा तो वह तुरन्त बाहर निकल आया, मोहल्ले के अन्य व्यक्ति भी आ गए, स्त्री-पुरुषों की भीड़ लग गई। कोई संगरू को समझाता, कोई सुखिया के आदमी को। दोनों तरफ लाठियां तनी थीं। स्पष्ट था, दोनों के पक्ष सबल थे। जहां संगरू के अनेक साथी थे, वहां सुखिया के पति मलखान के भी थे। उसी समय संगरू ने चिल्ला कर कहा—'यह मलखान हमारी जाति के मुंह पर कालिख का पोता फेर रहा है। परसों चमारिन का कुंए पर अपमान हुआ, तो यह मलखान ठाकुरों के साथ थाने गया। झूठी गवाही दे आया। हमारे लोगों को भी यह लड़ाता है। कोई खाता-पीता हो, तो उसे फूटी आंख भी नहीं देख पाता। मैंने मंगरू से अपनी लड़की के सम्बन्ध की बात चलाई तो दोनों मियां-बीवी जल भुन गए। कहती है इसकी औरत कि लड़की···मंगरू का लड़का···जीभ काट दूंगा, सुसरी की।'

एक आदमी आगे आया—'अरे, संगरू। नाबदान में लाठी मारेगा, तो कीचड़ उछलेगा। चुप रह तुम थोड़े से तो आदमी हो इस पुरवे में, तब भी लड़ते हो। उसने मलखान की ओर देखा—'भैया लड़की मेरी हो या तुम्हारी, वह सभी की आबरू है। बोलो इतना नहीं जानते तुम।'

मलखान ने कहा—'जानता क्यों नहीं चाचा।'

'तो बस, यही समझकर घर में बैठो। घर की बात बाहर मत निकालो। अपनी आबरू रखो।'

यह बात गांव में छुपी नहीं थी कि संगरू कुछ चमारों के साथ थाने गया था। वह थानेदार से साफ कह कर आया कि ठाकुर और अन्य जाति के लोग हम छोटी जातियों को सम्मान के साथ नहीं रहने देते। उस समय अन्य लोगों ने भी गवाही दी थी।

वह अमावस की रात थी। घोर काली-काली संध्या के झुटपुटे में जब संगरू अन्य व्यक्तियों के साथ बैठा हुआ हुक्का पी रहा था, तो तभी, एक व्यक्ति ने उससे कहा—तेरी लड़की भी भाग्य-वान है, संगरू। उसका विवाह करने की बात सोचता है, तो तेरा एक ही खेत सब खर्चा ओढ़ लेगा। अच्छा अनाज उगा है, तेरे खेत में।

दूसरा बोला, 'मेरा माथा ठनकता है। उस खेत पर बहुतों की निगाह है। अब वह पक चला है।'

तीसरे ने कहा—'संगरू, तू खेत की कटाई कर ले। उसे खलिहान में लाकर डाल दे। समझता तो है सौ दोस्त, सौ दुश्मन।

जिस व्यक्ति ने हुक्के में दम मार कर नेंचा संगरू की तरफ बढ़ाया, वह बोला, मैं दूसरों की तो क्या बात करूं, मलखान का डर सबसे बड़ा है। यह आस्तीन का सांप है। कभी डंक मार सकता है। आज उसे संगरू के खेत पर खड़े भी देखा था। बिज्जू की तरह घूर रहा था। जब मैं पास गया और उसे टंकोरा तो वह चौंक पड़ा था। यानी कोई गहरी बात सोच रहा था।'

संगरू ने सांस भरी—'भगवान सब देखता है। कल खेत कट जाएगा। उसी के अनाज की बिक्री से लड़की के हाथ पीले कर दूंगा।' उसने बताया—'क्या मलखान मुझसे बोलता नहीं है। मन में कांटा रखता है। मुझे पता है, वह ठाकुरों से भी मेरी बुराई करता है।'

कदाचित् इस बात का किसी को भी आभास नहीं था कि उसी रात में सुखिया ने अपने पति मलखान को लल-कारा, 'देख संगरू की लड़की हमारी लड़की है। अपनी जाति की है। तेरे मन में उसके प्रति मैल हो तो उसे मिटा दे। उस दिन गलती मेरी थी कि तुझसे

बात कह बैठी। जवान लड़की है, मन उसका भी है, तू क्या बीते दिनों को भूल गया। ब्याह होने के बाद चार दिन भी मुझे मां-बाप के नहीं रहने देता था।

परन्तु वह कुटिल और मुर्ख मलखान उस बात से प्रभावित नहीं हुआ। अपितु नितान्त गम्भीर बना बैठा रहा। वह सुखिया की किसी बात का उत्तर नही दे पाया। मानो किसी गहरी नदी के समान उस औरत को भी निरी रहस्यमयी समझ बैठा था।

पति को चुप देख, सुखिया ने फिर टंकोरा—'वह ठाकुर का लड़का गजराज कैसे आया था? क्या खुसफुस कर रहा था? उसी ने रमिया का घड़ा फोड़ा था। बेचारी को अपमानित किया था।

रूखे भाव से मलखान बोला—'कोई खास बात नहीं, चला आया था।'

तब सुखिया तमक उठी—'जी हां सरपंच हो न तुम गांव के जो सलाम बजाने आया था। या वैसे ही हवा में उड़ आया था। मैं उस बदजात को जानती हूं। बड़ा कुटिल है। बोल तो क्या दे गया? कुछ रुपये? कितने?

मलखान क्षुब्ध हो उठा—'क्या बकती है।' सिर मत खा।

किन्तु सुखिया चुप न रही—'संगरू का कोई नुकसान हुआ तो अपना सिर फोड़ दूंगी। मैं चिल्लाकर सबको सुना दूंगी।' मानों नदी में उफान आ गया था। वह मलखान को डुबो देना चाहती थी।

फिर भी, मलखान ने उपेक्षा दिखाई—'तेरा दिमाग फिरा है।

लेकिन सुखिया के स्वर में उद्विग्नता थी—'संगरू की लड़की मुझे ताई कहती है। मेरी गोद खिलाई है। उसका अहित मुझे क्या मैं जीवित नही रह सकती हूं।'

मलखान बोला नहीं। वह सुखिया के मन की गहराई नाप नहीं सका। उसने बोतल से थोड़ी शराब और ली और पीकर चारपाई पर पड़ गया।

चौकीदार जागते रहो की आवाज देकर निकल गया था। दूर जंगल में किसी का कुंआ चल रहा था और किसान का मल्हार राग सुखिया के कानों में आ रहा था। तभी चौंक कर उसने देखा कि मलखान की चारपाई खाली है। देखते ही वह अवसन्न रह गई। तुरन्त उठ बैठी। उसकी दिशा का लक्ष्य संगरू का खेत था। मन में कह रही थी, हाय। आदमी इतना शैतान है···ऐसा हैवान है···काश, वह नदी बन कर उसे डुबा देती।'

यूं सुखिया संगरू के खेत पर पहुंच गई। देखते ही वह चकित रह गई कि तीन-चार आदमी है। एक पूले में आग लगा रहे हैं। निश्चय ही वे संगरू का खेत जला देना चाहते हैं। तुरन्त ही सुखिया उस ओर दौड़ी परन्तु तब तक वह जलता हुआ पुवाल खेत में फेंक दिया गया था। एक तरफ आग भभक उठी। खेत जलने लगा। किन्तु सुखिया ऐसी पागल बनी कि हाथ से, अपने कपड़ों से उस आग को बुझाने लगी। साथ ही, वह चिल्ला रही थी अरे तुम्हारा नाश जाएगा···कीड़े पड़ेंगे तुम सभी के बदन में···तुम आदमी नहीं भेड़िया हो···रे···रे मलखान···

भाग्य से सुखिया की चिल्लाहट पर आदमी दौड़ आए। समूचा खेत जला नहीं, बच गया। परन्तु संगरू, उसकी पत्नी और लड़की को खेत की इतनी चिन्ता नहीं थी जितनी की सुखिया की थी। उसके शरीर का अधिकांश भाग जल गया था। चिन्ता की बात यह थी कि उसने पुलिस को जहाँ गांव के पण्डित लाला और ठाकुर का नाम बताया वहां अपने पति का नाम भी बता दिया। वे सब पकड़े जा चुके थे। उस सुखिया के मन में केवल एक ही बात लहकती, वह उसका मन्थन करती क्या सचमुच अब आदमी नहीं रहा···भगवान नहीं···वह जब संगरू की बेटी को देखती तो फफक कर रो पड़ती···।

किन्तु काश, मरने से पूर्व सुखिया सुन पाती कि उसका पति मलखान अन्य लोगों के साथ थाने से छूट तो आया, परन्तु स्वयं अपने प्रति विद्रोही हो उठा था। वह सुखिया की लाश के पास बैठा अपना सिर धुन रहा था और अपने किए पर पछता रहा था···

श्यामनगर, पिलोखड़ी रोड
लिसाड़ी गेट मेरठ-2 (उ० प्र०)

तू मिसाल बन

कालीचरण सोनी, 'रहबर' सोनी

बन सके तो उस जहां की तू मिसाल बन
सदियों तलक हो जिक्र जिसका वो कमाल बन
कमाल ही वो क्या जो न पा सके खिताब
सवाल ही वो क्या न हो जिसका कोई जवाब
जवाब जिसमें पिन्हा हो तू वो मिसाल बन—
उन मआलों की इबादतें करता है हर बगर
होता है जिनमें दोस्तो! तनिक सा भी असर
तामीर जिसपे खुदा हो फ़िदा वो मआल बन—
आते ही जिसके मिल सके हर रुह को करार
खिज़ाओं में भी यूं लगे क्यों आई हो बहार
बनाना ही है अगर मुझे तो वे ख्याल बन—

कचेरन कुंआ के निकट,
केशवगंज, वार्ड सागर (म० प्र०)

साहित्य समीक्षा

'रामायण के पात्र' खण्ड-1 एवं 2, लेखक : श्री नानाभाई भट्ट, अनुवादक : श्री काशीनाथ त्रिवेदी, प्रकाशक : सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली। प्रथम संस्करण 1977 ई०। खण्ड-1 पृष्ठ 273, खण्ड-2 पृष्ठ 220, मूल्य : रु० 8.50 तथा रु० 8.50।

श्री नानाभाई भट्ट से हिन्दी के पाठक भली भांति परिचित है। उनकी महाभारत पात्रमाला भी सस्ता साहित्य मंडल से प्रकाशित हुई थी, जिसे पाठकों ने बहुत पसन्द किया था। इस रचना के खण्ड-1 में, राम, लक्ष्मण, और सीता के चरित्र का अंकन किया गया है। यहां लेखक ने आधुनिक आर्यमानस के अनेकविध उच्चतम भावनाओं और आकांक्षाओं को मर्यादामणि श्री रामचन्द्र की व्यथाओं और भावनाओं में गूंथ दिया है। राम, लक्ष्मण और जानकी की तापस, त्रिपुटी में सर्वाधिक नम्र, मर्यादामणि रामचन्द्र ऋषि-मुनियों, राक्षसों, अनार्थों और राज-काजी पात्रों के साथ उनके वार्तालाप संधियां, मित्रता की प्रतिज्ञा ये सब चित्रण पाठक को ऐसे लगते हैं मानों वे आज के हों-भारत भ्रमण कर रहे गांधीजी के हों।

रामायण के पात्र खण्ड-2, में भरत, कैकेयी हनुमान मन्दोदरी, विभीषण और रावण का चरित्रांकन है। राम, सीता और लक्ष्मण ने चौदह वर्षों तक वनवास पाया, तो धर्मबुद्धि भरत ने अयोध्या के बाहर ही नन्दीग्राम में बल्कलधारी हो रामचन्द्र की अयोध्या की देखभाल की। धर्मभीरू भरत ने सदा अपनी कुल मर्यादा की रक्षा की और अयोध्या के सिंहासन जैसे लौकिक प्रलोभन से भी कभी विचलित नहीं हुए। अयोध्या भरत के कारण सचमुच वीर-माता कहलाई। स्वार्थ और प्रपंच की मूर्ति कैकेयी अनुताप करती है—मेरे हठ के कारण महाराज गये—मेरे ही हठ के कारण कौशल्या और सुमित्रा के दुःख का पार न रहा।' यहां कुशल पण्डित एवं सरल हृदय स्पष्टवक्ता हनुमान का भक्तिभाव उजागर है। विभीषण, सुग्रीव का साख्य और सौहार्द भी आकर्षक है।

इस रचना में वर्णित सभी पात्र बड़े सजीव लगते हैं। लेखक ने उन्हें सरसकथा-शैली के माध्यम से एक-सूत्र में पिरोया है। हिन्दी में अनूदित होने पर यह आकर्षक तनिक भी घटा नहीं, अपितु मूल जैसा ही प्रभावशाली है। इसके लिए अनुवादक निश्चय ही साधुवाद का पात्र है। आशा है, यह रचना आज के युवा पाठकों का मन मोहेगी और आर्य संस्कृति के प्रति उनमें श्रद्धा भरेगी। पुस्तक साज-सज्जा की दृष्टि से अच्छी बन पड़ी है।

—डा० वीरेन्द्र कुमार बड़सूवाला
बी 3/3, राजौरी गार्डन

तरुणोदय (वार्षिक अंक) सहज कविता-1 संपादक : डा० कृष्ण मुरारी 'उनिन्द्र'. प्रकाशक : तरुणोदय. मुरार (ग्वालियर)।

अनुभूत सत्य की सहज अभिव्यक्ति का नाम ही सहज कविता है। निरर्थक वाग्जाल, अर्थहीन अटपटे दुरुह प्रतीकों में पाठक या श्रोता को उलझाने वाले कवियों की परम्परा से हट कर सहज कविता-1, संकलन प्रस्तुत किया गया है। तरुणोदय के इस वार्षिक अंक में 23 कवियों की कवितायें संकलित हैं। इस संकलन के सभी कवियों का उद्देश्य है, 'जैसे तू बोलता है, वैसा तू लिख, जैसा तू सोचता है वैसा तू देख। पूर्णा, रेखाचित्र बन गया, आदमी कोई, खुजराहो, असमानता की मित्ति जैसी कवितायें इस संकलन की विशिष्टता हैं। प्राय: सभी कवियों की रचनाओं में व्यंग्य और तुकदन्दी की प्रधानता है। भाषा और कवित्व की दृष्टि से कुछ रचनाओं को छोड़कर प्राय: सभी साधारण स्तर की हैं। कविता का मापदण्ड केवल सहजता न होकर मार्मिकता एवं सप्राणाता होना चाहिए—जिसका इस संकलन में अभाव है।

आवरण सज्जा एवं छपाई आकर्षक है। मुद्रण की दृष्टि से अशुद्धियां नहीं के बराबर हैं। प्रकाशक ने ग्वालियर की नवोदित प्रतिभाओं को प्रकाशन में लाने का सफल प्रयास किया है।

—डा० मंजुलता सिंह
अध्यक्ष-हिन्दी विभाग
दौलत राम कालेज,
दिल्ली, विश्वविद्यालय दिल्ली

एक अटूट सिलसिला (उपन्यास) : लेखक : डा० मस्त-राम कपूर, प्रकाशक : सामयिक प्रकाशन, जटवाड़ा दरियागंज, नई दिल्ली-110002, मूल्य : 15 रु०।

आलोच्य उपन्यास हिमाचल प्रदेश के तीन ग्रामों में बसे कुछ परिवारों की एक जीती जागती कहानी है जिसे लेखक ने एक कथानक के रूप में प्रस्तुत किया है।

लेखक के अनुसार राजाओं और उनके वंशजों देशी-विदेशी साहबों और समाज की जड़ प्रथाओं से कुचली हुई चन्द आत्माओं की कथा-व्यथा जो आजादी के बाद भी आर्थिक उत्पीड़न एवं दिशाहीनता के एक अटूट सिलसिले में उलझकर अन्तहीन हो गई है। तीन ग्रामों की सीमा में बंधा होने पर भी यह उपन्यास उस समस्त ग्राम्यांचल की कुछ मूलभूत समस्याओं को स्पर्श करता है जो अपनी युवाशक्ति शहरों को सौंप देने के कारण अंधेरे से निकलना चाहकर भी निकल नहीं पाता है।

ग्रामों में आज के जमींदारी उन्मूलन तथा गांवों के विकास कार्यक्रमों पर लेखक ने काफी अच्छा प्रकाश डाला है। भूमि सुधारवादी आन्दोलनों में सरकारी मशीनरी द्वारा सीधे-साधे ग्रामीणों पर किए जाने वाले अत्याचारों का भी इस उपन्यास में पर्दाफाश किया गया है।

आज के समाज में बढ़ती जा रही धार्मिक मान्यताएं, छुआछूत, विधवा विवाह, अन्तर्जातीय विवाह तथा पढ़े-लिखे नवयुवकों का देहातों से शहरों की ओर भाग जाना और छोटी व पिछड़ी जातियों का मानसिक हृदयस्पर्शी चित्रण इस उपन्यास में है।

उपन्यास में आधुनिक शिक्षित ग्रामीणों की पीढ़ी के प्रमुख पात्र हैं—दिवाकर, अमर तथा कृष्ण आदि। मियां यशवंत चंद तथा पंडित दयाराम के चरित्र, शोषकों व पूंजीपतियों ने किन-हथकंडों को अपनाया और अन्य दुरुप्रयोग किए, की सजीव कहानी भी इसमें स्पष्ट होती है। उपन्यास के प्रमुख पात्रों में रमा है जो कि देहाती समाज की नारी का प्रतिनिधित्व करती है। दूसरी पात्र है—रूपा।

उपन्यास की भाषा सरल और शैली रोचक है। सर्वसाधारण के लिए उपयोगी है। पुस्तक का संपादन व प्रकाशन ठीक है। चित्रों का एक दम अभाव खटकता है। मूल्य भी कुछ अधिक लगता है, ऐसे श्रेष्ठ सामाजिक उपन्यासों का मूल्य यदि कम रखा जाये तो उत्तम रहता है। यह उपन्यास पुस्तकालयों व विद्यालयों के लिए विशेष लाभप्रद है।

—मदन 'विरक्त

सम्पादक 'भारत ग्राम'

24, ईस्ट अंगद नगर, दिल्ली-110051

आधी रात से सुबह तक : लेखक लक्ष्मी नारायण लाल, प्रकाशक राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली-6, पृष्ठ सख्या-181, मूल्य-12 रु०।

प्रस्तुत पुस्तक में लेखक ने आपात्स्थिति लगने की 25 जून, 1975 की आधी रात से लेकर 18 जनवरी 1977 की सुबह तक की घटनाओं का इतिहास औपन्यासिक ढंग से लिखा है। पुस्तक के शीर्षक से ही ऐसा विदित होता है।

यह पुस्तक आपात-स्थिति काल में होने वाले युवक संगठन एवं संघर्ष मोर्चों के कार्य-क्रमों तथा सरकार द्वारा किए गए कार्यों की जानकारी कराने का एक राजनीतिक दस्तावेज है। शैली उपन्यास की होते हुए भी सरल एवं स्पष्ट हैं। मुख्य शीर्षक और अन्दर प्रकरणों के शीर्षकों को कला का रूप देकर विशेष आकर्षक बना दिया है। पाठक इस पुस्तक को बड़े चाव से पढ़ेंगे। 2-3 प्रूफ रीडिंग की मामूली भूलें न के बराबर हैं। पृष्ठ 33 से लेकर 48 तक दुबारा ठीक किए गए हैं जो कि पहले ही ठीक कर लेने चाहिए थे। भाषा सरल तथा सुबोध है। पुस्तक की साज-सज्जी अच्छी बन पड़ी है।

—चन्द्रपाल सिंह

5-1, आजाद नगर, खंदारी, आगरा-2 (उ० प्र०)

भगतसिंह : पत्र और दस्तावेज, सम्पादक : वीरेन्द्र सिन्धु प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली। मूल्य 12 रु०, पृष्ठ संख्या 122।

अमर शहीद भगत सिंह द्वारा लिखित पत्रों का संकलन वीरेन्द्र सिन्धु द्वारा बड़ी कुशलता और सूझबूझ के साथ किया गया है। आलोच्य पुस्तक में उनके बचपन और युवावस्था के अलभ्य पत्र एकत्रित किए गए हैं। यह जानकर आश्चर्य मिश्रित हर्ष का होना स्वाभाविक है कि एक क्रान्तिकारी देशभक्त इतना अध्ययन शील विचारक और कलम का धनी भी हो सकता है। 23 वर्ष की आयु में भगत सिंह फ्रांस, आयरलैंड तथा रूस की क्रान्तियों का गहन अध्ययन कर चुके थे। कालेज जीवन से लेकर फांसी की कोठरी तक उनका अध्ययन जारी रहा। इस पुस्तक की सम्पादिका वीरेन्द्र सिन्धु ने इन पत्रों को एकत्र कर एक ऐतिहासिक कार्य किया है।

पुस्तक के लेखक और प्रकाशक दोनों बधाई के पात्र हैं। क्या ही अच्छा होता कि उनके कुछ हस्तलिखित पत्रों के ब्लाक भी इस पुस्तक में प्रकाशित किए जाते। पुस्तक की साज-सज्जा सुन्दर बन पड़ी है। प्रूफ की अशुद्धियां नगण्य है।

—शशि चावला

उप-सम्पादिका (कुरुक्षेत्र)

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय (खंड पैंसठ), प्रकाशक : प्रकाशन **विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय।**

इस खंड में 15 मार्च, से जुलाई, 1937 तक के गांधी जी के पत्र और भाषण आदि संकलित हैं। इस पुस्तक में सामग्री का संकलन सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय के अन्य खंडों की तरह किया गया है, अर्थात् पहले 'भूमिका', उसके बाद 'पाठकों को सूचना' 'विषय सूची' और पांच सौ छत्तीस पत्र आदि के उपरान्त आठ परिशिष्ठ, सामग्री के साधन सूत्र, तारीखवार जीवन वृत्तान्त, शीर्षक और सांकेतिका दी गई है।

विषय वस्तु की दृष्टि से इस खंड का विशेष महत्व है जैसा कि ऊपर कहा गया है कि इस खंड में 15 मार्च से 3, जुलाई, 1937 तक गांधी जी द्वारा लिखे गए पत्र आदि क. सामग्री संकलित है। इस अवधि में कांग्रेस को देश के ... प्रान्तों में मंत्रिमंडल बनाने के अवसर का लाभ उठाकर जन सम्पर्क करने का सुनहरा अवसर मिला था और उसने उस पूरा पूरा लाभ उठाया था। इस दिशा में गांधी जी का महत्व-पूर्ण योगदान था। उन दिनों ब्रिटिश सरकार के साथ मंत्रिमंडल बनाने में सहयोग देने के प्रश्न पर काफी विवाद उपस्थित हो गया था। इस विवाद का निपटारा गांधी जी ने पूरे धैर्य के साथ कर देश को कुशल नेतृत्व प्रदान किया था। इस परिस्थिति की बड़ी ही मार्मिक अभिव्यक्ति धनश्याम दास बिड़ला को गांधी जी द्वारा 18 जुलाई, 1937 को लिखे गए पत्र में हुई है जिसका अंश यहां उद्धृत है : "ऐसा कहो मेरी हालत प्रसूता की सी थी। प्रसूता को भीतर सब कुछ होता है बिचारी उसका वर्णन नहीं दे सकती। अब तो हम जानते हैं क्या हुआ।" (पृ० 451) इसी खंड में वर्ग संघर्ष को लेकर जवाहर लाल जी

के साथ असहमति व्यक्त करते हुए गांधी जी का वह पत्र भी संकलित है जिसमें उन्होंने लिखा था "वे वर्ग संघर्ष पर भरोसा नहीं करते हैं।...मैं कहता हूं सम्पत्ति जड़ है, लेकिन धनिक तो जड़ नहीं है। उनका हृदय परिवर्तन हो सकता है। वे कहते हैं ऐसा कभी हुआ ही नहीं।" (पृ० 129) पत्रकार के रूप में गांधी जी का वह पत्र भी बहुत ही महत्वपूर्ण है जो उन्होंने जवाहरलाल जी को 15 जुलाई, 1937 को लिखा था। इस पत्र के प्रारंभ की पंक्तियां इस प्रकार हैं : "परन्तु यह पत्र मैं तुम्हें यह बताने के लिए लिख रहा हूं कि मैंने कांग्रेसी मंत्रिमंडलों के कार्यकलाप और संबंधित विषयों पर लिखना शुरू कर दिया है। मुझे हिचकिचाहट थी, परन्तु मैंने देखा कि जब मेरी भावनाएं इतनी तीव्र हो गई हैं तो लिखना मेरा कर्त्तव्य है।"

इस अकेले खंड में ही ऐसे अनेक स्थल भरे हुए हैं कि जिन पर बार बार चिन्तन किया जा सकता है और इन स्थलों पर गांधी जी के विचार आज भी हमें रास्ता दिखा सकने में पूर्ण समर्थ हैं। प्रूफ की अशुद्धियां नगण्य हैं तथा साज सजा अच्छी है।

—डा० देवेश चन्द्र
बी० 51, पंडारा रोड,
नई दिल्ली-110003.

जवाहर लाल नेहरू के भाषण (प्रथम खण्ड), प्रकाशक : प्रकाशन विभाग (सूचना और प्रसारण मंत्रालय, (भारत सरकार), नई दिल्ली, पृष्ठ संख्या 284, मूल्य 12रु० :

भारत सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित प्रस्तुत समीक्ष्य पुस्तक में भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू के कुछेक भाषणों का संकलन किया गया है। इस पुस्तक में, जैसा कि उसकी प्रस्तावना में कहा गया है, नेहरू जी के सितम्बर, 1946 से दिसम्बर, 1954 के विभिन्न राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय, राजनीतिक, धार्मिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक विषयों पर उनके सुस्पष्ट एवं ओजपूर्ण उद्‌गारों को संकलित किया गया है।

समीक्ष्य पुस्तक में नेहरू जी के भाषणों को सुविधा की दृष्टि से संदर्भ और विषयों के वैविध्य को मद्देनजर रखते हुए पांच शार्षकों के तहत प्रस्तुत किया गया है, यथाक्रम—आजादी के दायित्व, राष्ट्रीय एकता और संस्कृति, आयोजन और आर्थिक प्रगति, भारत और विश्व तथा विविध।

गुटनिरपेक्षता, शांति और निरस्त्रीकरण का सिद्धांत प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक साज सज्जा की दृष्टि से सुन्दर बन पड़ी है। प्रूफ की अशुद्धियां नगण्य है।

भारती शर्मा द्वारा—जगदीश शर्मा
3, रायसीना रोड,
नई दिल्ली-110001.

रमणी : (जून अंक) सम्पादिका कुमारी जनक सचदेव, प्रकाशक, जनक सचदेव, रमणी कार्यालय 2994/1-ए रणजीत नगर, नई दिल्ली, वार्षिक मूल्य, 12, पृष्ठ 40।

पत्रिका में कहानी, रूपक के माध्यम से बड़ी रोचक सामग्री प्रस्तुत की गई है। राजनीति के रंगमंच शीर्षक लेख में राजनीतिक चर्चा, आपातकाल की देन, पर्वतीय अंचल में अल्मोड़ा लेख में इस पार्वत्य प्रदेश की सुषमा का वर्णन बड़े मार्मिक शब्दों में किया गया है। इसी तरह इस अंक में जो कहानियां दी गई हैं वे भी साहित्यिक दृष्टि से बड़ी मनोहारी और आकर्षक हैं। चित्रों के संयोग से पत्रिका की साज-सज्जा बड़ी सुन्दर वन पड़ी है। मुख पृष्ठ भी बड़ा आकर्षक है। पत्रिका में कागज भी अच्छे किस्म का प्रयोग में लाया गया है। प्रूफ की अशुद्धियां नगण्य हैं।

—शशि चावला
उप-सम्पादक (कुरुक्षेत्र)

कमल नयन बजाज-व्यक्ति और विचार : सम्पादक-यशपाल जैन, सह-सम्पादक-मुकुल उपाध्याय, प्रकाशक-सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 412, मू०: बीस रु०

प्रसिद्ध राष्ट्र सेवी एवं त्यागी आत्मा स्वर्गीय सेठ जमनालाल बजाज के ज्येष्ठ पुत्र स्वर्गीय कमलनयन बजाज की स्मृति में प्रकाशित इस ग्रंथ में उनके सम्पर्क में आने वाले लोगों के संस्मरण और इनके साथ ही श्री कमलनयन द्वारा लिखित संस्मरणों, व्याख्यानों, लेखों एवं पत्रों का संकलन प्रस्तुत है।

कमलनयन के संबंध में प्रस्तुत समग्र सामग्री एक ओर जहां उनके व्यक्तित्व, स्पष्टवदिता, प्रत्युत्पन्न मतित्व बुद्धिमत्ता, विनोद प्रियता, तथा सरलता पर पूर्ण प्रकाश डालती है वहां दूसरी ओर हमें उनकी सेवा-भावना के विविध पक्षों की भी जानकारी प्रदान करती है।

कमलनयन ने राजनीति, शिक्षा, उद्योग तथा ऐसे ही अनेक क्षेत्रों में कार्य के आदर्श प्रस्तुत किए। इन सबके पीछे उनकी सेवा भावना सदा लगी रही। उन्होंने जीवन के किसी भी क्षेत्र में सेवा भावना की उपेक्षा नहीं होने दी।

यह समस्त सामग्री निश्चित रूप से सेवा या देशभक्ति की भावना पाठकों में उत्पन्न और विकसित करने में पूर्ण सक्षम है। अतः इस ग्रंथ की उपयोगिता असन्दिग्ध है।

प्रस्तुत ग्रंथ को विशिष्ट उपयोगिता के लिए सस्ता साहित्य मण्डल विशेष धन्यवाद का पात्र हैं। इसका मूल्य भी नितान्त उचित है। इसके साथ ही ग्रंथ की छपाई, रूप सज्जा, कागज तथा आवरण आदि सभी आकर्षक हैं। इस प्रकार यह ग्रंथ सभी दृष्टियों से आकर्षक उपयोगी तथा पठनीय है।

-डा० लक्ष्मीनारायण पाठक
ए-339, सूर्य नगर,
पो० आ० चिकम्बरपुर,
गाजियाबाद-201006

भारतीय कृषि प्रदर्शनी ऐग्री एक्स्पो '77

भारतीय कृषि प्रदर्शनी 1977 (ऐग्री एक्स्पो '77) इस वर्ष 11 नवम्बर से 13 दिसम्बर तक प्रगति मैदान में लगाई जा रही हैं। इस प्रदर्शनी का आयोजन भारत सरकार की ओर से भारतीय व्यापार मेला प्राधिकरण द्वारा किया जा रहा है।

प्रदर्शनी का उद्देश्य कृषि तथा इससे संबंधित क्षेत्रों में स्वतंत्रता के बाद हुई प्रगति की जानकारी देना और प्रदर्शनी में भाग लेने वाले बाहरी देशों के साथ इन क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने के मार्गों की खोज करना है।

यह प्रदर्शनी कृषि और ग्रामीण उद्योग के विकास में नई सरकार के विश्वास की प्रतीक होगी। कृषि हमारे देश में केवल एक आर्थिक कार्य-कलाप ही नहीं है बल्कि हमारी जनता के विशाल समूह के लिए प्रजातंत्र के समान ही जीवन की एक पद्धति है। हमारी आबादी का लगभग 80 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है और उसमें से लगभग 45 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे हैं। स्पष्ट है कि इस समस्या और इसके साथ ही मानवता के इस विशाल समुदाय की बेरोजगारी की समस्या का समाधान कृषि पर आधारित उद्योग, हथकरघा और दस्तकारी, कुटीर और लघु उद्योगों में आर्थिक कार्य-कलापों की अधिक वृद्धि करके ही हो सकता है।

ग्रामीण भारत

इस प्रदर्शनी में केवल कृषि के विविध क्षेत्रों में हुई प्रगति का दिग्दर्शन कराया जाएगा बल्कि भारतीय ग्रामीण जीवन की बहुविध विशेषताओं और सौंदर्य की झलक भी दिखाई जाएगी। इसके साथ ही सम्पूर्ण ग्रामीण जीवन में जो महान नवीन जागरण आ रहा है, जो नवीन आकांक्षाएं, आर्थिक कार्य-कलापों और जन-जीवन को परिवर्तित कर रही हैं और जो उन्नति के लिए नई चेतना सारे ग्रामीण क्षेत्र में व्याप्त हो रही हैं उसकी झलक भी इस प्रदर्शनी में दिखाई जाएगी। संक्षेप में इस प्रदर्शनी में आज के भारतीय ग्रामीण जीवन के विविध पक्षों की झलक दिखाने का प्रयास किया जाएगा।

कृषि प्रदर्शनी 1977 का आयोजन कृषि के महत्व को बताने के लिए बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। इसकी प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार होंगी—यथार्थतः भारत में होने वाली यह अपने प्रकार की सबसे बड़ी प्रदर्शनी होगी। इस प्रदर्शनी में कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्रों में प्राप्त राष्ट्रीय उपलब्धि का प्रभावपूर्ण प्रदर्शन होगा। प्रांतीय प्रदर्शन में प्रमुख फसलें जैसे चावल, गेहूं, ज्वार, वन-उत्पाद जैसे इमारती लकड़ी, कागज रबर, लाख, राल, काष्ठ, लुगदी बनखंड, सामग्री, मत्स्य उद्योग एवं डेरी उद्योग, भोजन संसाधन एवं डिब्बाबंदी, तंतु जैसे रुई, पटसन, मेस्ता, ऊन, रेशम, हथकरघे तथा मशीन निर्मित वस्त्र, पशु प्रजनन, पशुपालन, पशु चिकित्सा सेवाएं तथा पशु भोजन तथा पेय, फल एवं सब्जियां भी शामिल होंगी। इस प्रदर्शनी में चर्मशोधन तथा चमड़ा उत्पादन उद्योगों सहित ग्राम उद्योगों पर विशेष बल दिया जाएगा।

इस मेले में विभिन्न केन्द्रीय मंत्रालय जिसमें वाणिज्य मंत्रालय भी शामिल है, राज्य सरकारें तथा बहुसंख्यक सार्वजनिक तथा निजी क्षेत्र की फर्में भी, भाग लेंगी। केन्द्रीय मंत्रालयों में कृषि मंत्रालय सबसे बड़ा भागीदार होगा। बाहर के अनेक देशों ने भी इस प्रदर्शनी में अपने मंडप लगाने का निर्णय लिया है।

विशाल प्रदर्शनी

शिक्षा एवं कल्याण, स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण, रसायन एवं उर्वरक, सूचना तथा प्रसारण, उर्जा तथा पेट्रोलियम मंत्रालयों के कार्यकलापों में विज्ञापन तथा दृश्य प्रचार निदेशालय सहयोग देगा। हिमाचल प्रदेश तथा बिहार को छोड़कर सभी राज्य सरकारों द्वारा सूचित मांग के आधार पर प्रत्येक के लिए उचित स्थान निश्चित कर दिया गया है। अंडमान तथा निकोबार द्वीप, अरुणाचल प्रदेश. दिल्ली, गोवा, दमन तथा दीव, मिजोरम तथा पांडिचेरी द्वारा भी प्रदर्शनी में भाग लेने की पुष्टि हो गई है। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में हिन्दुस्तान फोटोफिल्म मैन्यूफेक्चरिंग कम्पनी लिमिटेड, भारतीय काजू निगम, भारतीय संवेष्टन संस्थान, भारतीय उर्वरक निगम, खादी तथा ग्राम उद्योग आयोग, राज्य व्यापार निगम तथा उर्वरक एवं रसायन ट्रावनकोर लिमिटेड शामिल हैं। भारतीय किसान उर्वरक निगम लिमिटेड, ग्रामीण विकास उद्योग के माध्यम से भाग लेगा। केन्द्रीय भंडारागार निगम, भारतीय राष्ट्रीय बीज निगम तथा भारतीय खाद्य निगम, कृषि एवं सिंचाई मंत्रालय के मण्डप में ही भाग लेंगे। इसके अतिरिक्त, प्रायः सभी निर्यात संवर्द्धन परिषदें तथा वस्तु बोर्ड, जिनका कृषि संबंधी उत्पादों से सीधा संबंध है, इस प्रदर्शनी में भाग लेंगे। जहां तक निजी क्षेत्रों का संबंध है, लगभग दस संगठनों ने प्रदर्शनी में भाग लेने की पुष्टि की है। विदेशी भागीदारों में से जापान विदेश व्यापार संगठन (जेट्रो) तथा सोवियत रूस का नाम लिया जा सकता है।

ग्राम विकास और कृषि क्षेत्र में हुई उपलब्धियों पर विशेष प्रकाश डालने की दृष्टि से इस कृषि प्रदर्शनी के 'ले आउट प्लान' में ग्रामीण भारत मंडप (रूरल इंडिया कम्प्लेक्स) को एक बड़ा क्षेत्र दिया गया है और साथ ही उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम के लिए प्रादेशिक चौक रहेंगे जिनके आसपास इन क्षेत्रों के राज्यों के मंडपों को स्थान देने का प्रयास किया गया है। ग्रामीण भारत मंडप से पूरा ग्राम जीवन, उसका वातावरण और उसकी संस्कृति, परम्परागत शिल्प व लोक साहित्य जो कि देश के विभिन्न भागों के जन जीवन का अविभाज्य अंग है, जीवन रूप में प्रदर्शित किया जाएगा।

बैलगाड़ी चौक

प्रदर्शनी में विशेष रूप से दर्शनीय एक 'बैलगाड़ी चौक' की भी व्यवस्था की गई है जिसमें परम्परागत और आधुनिक ढंग की बैलगाड़ियां प्रदर्शित की जाएंगी। खेतों की उपजों को ग्रामीण क्षेत्रों में एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाने के लिए बैलगाड़ी ही मुख्य आधार रही है। प्रदर्शनी का यह विशिष्ट आकर्षण रहेगा। प्रदर्शनी में एक अन्य क्षेत्र विभिन्न राज्यों के विविध प्रकार के पशुओं की प्रजातियों के प्रदर्शन के लिए निर्धारित किया गया है। इसमें मुर्गियों, दुधारू पशुओं, भेड़ों तथा अन्य पालतू पशुओं के उत्तम नमूनों को एक जगह देखा जा सकेगा।

यद्यपि भारतीय कृषि प्रदर्शनी मूल रूप से एक राष्ट्रीय प्रदर्शनी है, इसका एक उद्देश्य इस प्रकार की कृषि वस्तुओं और सेवाओं का प्रदर्शन करना होगा जिनका निर्यात किया जा सकता है। मुख्य रूप से मध्य पूर्व और खाड़ी क्षेत्र के देशों तथा विकसित देशों के महत्वपूर्ण ग्राहकों से सम्पर्क किया गया है। मछली आदि समुद्री उत्पाद, चमड़ा, पशुओं के चारे, मसाले, चीनी, बिरोजा, इमारती लकड़ी, अखरोट, चाय, काफी तथा अन्य पेय और अनेक प्रकार के खेती के औजारों, मशीनों व उपकरणों आदि की खरीद के लिए प्रतिनिधिमंडलों और ग्राहकों को प्रदर्शनी के समय व्यापारिक बातचीत के लिए आमंत्रित किया गया है। क्रेता-विक्रेता सम्मेलन प्रदर्शनी का एक महत्वपूर्ण भाग होगा। सामान्य रूप से यह अपेक्षा की जाती है कि इन प्रतिनिधिमंडलों के आगमन का व्यय निर्यात प्रयत्न में लगी हुई संबंधित निर्यात संवर्द्धन परिषदें, वस्तु-बोर्ड तथा भाग लेने वाले निर्यात सदन, मंत्रालय तथा सरकारी विभाग ही वहन करेंगे। वाणिज्य मंत्रालय किए जाने वाले कार्य तथा प्रतिनिधिमंडलों को दी जाने वाली सुविधाओं से संबंधित योजना एवं समन्वय का काम करेगा।

मंडप और भवन के आसपास हरा भरा वातावरण बनाने के लिए इसे पौधों और बैलों से सजाया जाएगा। कृषि मेले के अनुरूप विशेष रूप से एक 'ले आउट प्लान' तैयार किया गया है जिससे कृषि मेले और औद्योगिक मेले में अंतर अनुभव किया जा सके। डिजाइन बनाने वालों ने सूझबूझ और दक्षता का परिचय देते हुए वर्तमान 'ले आउट प्लान' को नया रूप दिया है। कृषि जैसे विषय विशेष की नई प्रदर्शनी के लिए यह वांछित ही है।

इस भवन के स्थायी खंड में 'हाल आफ नेशन्स, चार हाल्स आफ इंडस्ट्रीज, हाल संख्या-2, सभागार और अल्पाहार-गृह शामिल हैं। इस खंड में मेले का महत्वपूर्ण भाग होगा। हाल आफ नेशन्स और हाल आफ इंडस्ट्रीज में भारतीय कृषि, खाद्य, सिंचाई, कृषि अनुसंधान और विकास, ग्रामीण विकास और सहकारिता की झांकी प्रस्तुत की जाएगी। हाल संख्या दो में कृषि के क्षेत्र में भारत की निर्यात क्षमता की झलक दिखाई जाएगी। इसका आयोजन अनेक जिन्स-मंडल और निर्यात संवर्धन परिषदें कर रही हैं। भारतीय हथकरघा और कृषि अनुसंधान और विकास के लिए अणु शक्ति इसके दो प्रमुख विषय होंगे। इस क्षेत्र में स्थित आडिटोरियम और थियेटरों में प्रत्येक राज्य के राष्ट्रीय दिवस कार्यक्रमों का आयोजन किया जाएगा जिनमें सांस्कृतिक कार्यक्रम और ग्रामीण कार्यक्रम पेश किए जाएंगे और खेती बाड़ी के उन्नत तरीकों के उपयोग, और हथकरघा दस्तकारी, मिट्टी के बर्तन बनाने की कला, चमड़े के सामान आदि जैसे ग्रामीण उद्योगों से संबंधित शैक्षिक और वैज्ञानिक चलचित्र प्रदर्शित किए जाएंगे। खादी और ग्राम उद्योग आयोग सारे देश में ग्रामीण उद्योगों के विकास से संबंधित एक भव्य और प्रभावशाली झांकी प्रदर्शित करेगा।

यद्यपि यह प्रदर्शनी दिल्ली में हो रही है परन्तु मूल रूप से यह ग्रामीण जनता की ओर निदेशित है। भारत एवं विदेशों में कृषि के क्षेत्र में हुए अद्यतन विकास से अवगत कराने के लिए कृषि दर्शन योजना के अन्तर्गत विभिन्न राज्यों से लगभग 5,000 किसानों को दिल्ली दिखाने के लिए लाया जाएगा। सम्पूर्ण देश में प्रदर्शनी के संदेश को पहुंचाने में प्रत्येक किसान का आना गुणात्मक प्रभाव डालेगा। ऐसे मेलों का ग्रामीण अभिमुखीकरण के लिए, भविष्य में प्रमुख ग्राम केन्द्रों में ऐसे कृषीय मेलों के आयोजन का प्रस्ताव है। ★

सहकारी समितियों के माध्यम से समृद्धि

1963 से राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम ने, सहकारी समितियों के माध्यम से देश की आर्थिक व्यवस्था बनाने में, मुख्य भूमिका निभाई है। यह निम्न आंकड़ों से स्पष्ट होता है :—

	1963-64	1974-75
सहकारी समितियों द्वारा बेचे गए कृषि उत्पादन का मूल्य	160 करोड़ रु०	1,575 करोड़ रु०
सहकारी समितियों द्वारा विपणित किए गए उर्वरकों एवं कृषि उपकरणों का मूल्य	54 करोड़ रु०	894 करोड़ रु०
ग्रामीण क्षेत्रों में सहकारी समितियों द्वारा बेची गई उपभोक्ता वस्तुओं का मूल्य	28 करोड़ रु०	550 करोड़ रु०
प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों द्वारा जारी किए गए अल्प-कालीन एवं मध्यम-कालीन ऋण	203 करोड़ रु०	980 करोड़ रु०
सहकारी समितियों द्वारा उत्पादित चीनी का मूल्य	4.7 लाख टन (देश के कुल उत्पादन का 21.3%)	20.33 लाख टन (राष्ट्रीय उत्पादन का 47.7%)
भण्डारण क्षमता	11 लाख टन	46.44 लाख टन

राष्ट्र की कृषि सहकारी समितियों के विकास की नीति के अनुसरण में रा० स० वि० नि० अब तक 200 करोड़ रु० लगा चुका है। देश की कुल उर्वरक खपत का 60 प्रतिशत से भी अधिक सहकारी समितियों द्वारा अपनी 54,000 सहकारी खुदरा डिपों के माध्यम से वितरण किया जाता है।

रा० स० वि० नि० को सहकारिता में अपने योगदान के लिए गर्व है तथा और भी ऊंचे लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील है।

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम

(सांविधिक निगम)

मुख्य कार्यालय :- ईरोज अपार्टमैंटस, 56 नेहरु प्लेस. नई दिल्ली-24

क्षेत्रीय कार्यालय :- बंगलौर, भोपाल, कलकत्ता, चण्डीगढ़, गोहाटी, पटना, पूना, जयपुर।

बागेश्वर का पंचायत उद्योग प्रगति के पथ पर

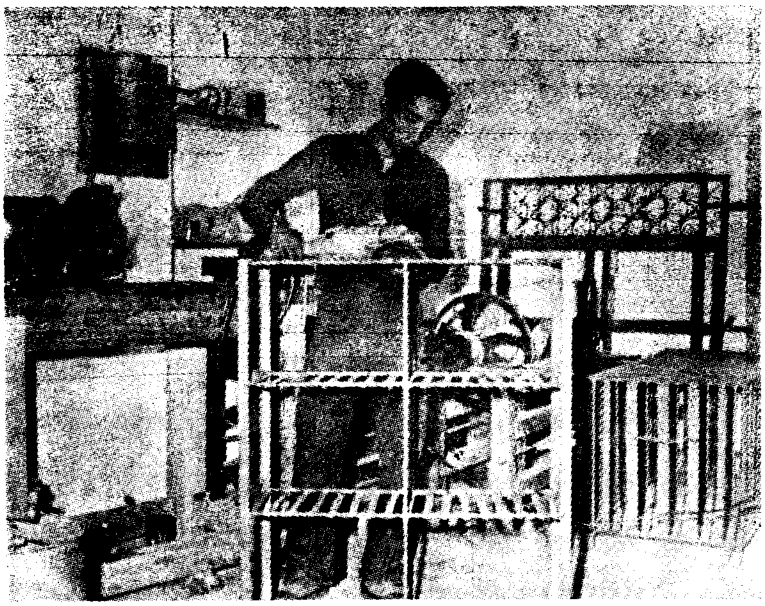

कारीगर फर्नीचर बनाते हुए

प्रदेश के उत्तरी भाग में स्थित पर्वतीय अंचलों में स्थापित पंचायत-उद्योग बागेश्वर, जिला अल्मोड़ा पंचायती राज विभाग द्वारा सम्पादित कराये जा रहे कार्यक्रमों का एक प्रमुख अंग बन रहा है। पहाड़ी क्षेत्रों में रहने वाले गरीब, अशिक्षित एवं साधनहीन लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने तथा उनकी आवश्यकता की छोटी-छोटी वस्तुओं की पूर्ति करने की दिशा में यह पंचायत उद्योग महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है।

पंचायत उद्योग, बागेश्वर, की स्थापना जनवरी, 1969 में पंचायती राज अधिनियम की धारा 30 की व्यवस्थाओं के अन्तर्गत की गई। इस उद्योग में प्रारम्भ में 54 गांव सभाओं ने 7 हजार 863 रुपये की पूंजी लगाई और इसमें 26 कुशल तथा अकुशल कारीगरों ने काम करना आरम्भ किया।

इस पंचायत उद्योग में सर्वप्रथम लकड़ी के फर्नीचर व फलों की पैकिंग के बक्से बनाने का कार्य प्रारम्भ किया और शनै-शनैः अब इस पंचायत उद्योग में टीन का सामान, शौचालय सेट, गमले, जाली, कृषि यंत्र, ऊन का सामान, लकड़ी के खिलौने आदि-आदि का कार्य किया जाने लगा है और यह पंचायत उद्योग दिनों-दिन पहाड़ी क्षेत्रों के निवासियों की अन्य आवश्यकताओं की वस्तुओं की पूर्ति का कार्य करने के लिए सतत प्रयत्नशील हैं।

54 गांव सभाओं की 7 हजार 863 रुपये की शेयर पूंजी से स्थापित इस पंचायत उद्योग ने कार्य प्रारम्भ किया और इस समय इसमें 99 गांव सभाओं की 82 हजार 300 रुपये की शेयर पूंजी लगी हुई है। प्रशासनिक एवं आर्थिक कठिनाइयों के होते हुए भी इस पंचायत उद्योग ने जो क्रमिक प्रगति की है, उसका व्यौरा इस प्रकार है :—

वर्ष	उत्पादन रु०	बिक्री रु०	लाभ रु०
68-69	623	173	—
69-70	2,216	3,715	32
70-71	13,351	11,309	1,061
71-72	9,430	5,260	1,201
72-73	29,917	17,255	13,409
73-74	4,85,543	4.67,447	40,567
74-75	4,35,991	5,81,565	19,701
75-76	8,22,591	8,78,310	16,771
76-77	14,22,227	16,79,886	83,994

पंचायत उद्योग बागेश्वर के उपलब्ध आंकड़े इसकी क्रमिक प्रगति के स्पष्ट प्रमाण हैं। इस पंचायत उद्योग ने वर्ष 76-77 में प्रदेश भर में समस्त स्थापित 821 पंचायत उद्योगों से अधिक बिक्री करके प्रथम स्थान प्राप्त कर नया कीर्तिमान स्थापित किया है।

इस पंचायत उद्योग की प्रगति में मुख्य बाधाएं कच्चे माल का शीघ्र उपलब्ध न होना, आर्थिक साधनों की कमी तथा बिक्री का क्षेत्र निर्धारित न होना एवं कार्यकर्ताओं की कमी है जिसे शासन स्तर से पूरा किया जाना चाहिए। ★

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-1 द्वारा प्रकाशित और
केसर क्यारी इलैक्ट्रिक प्रेस, फरीदाबाद-121003 में मुद्रित।

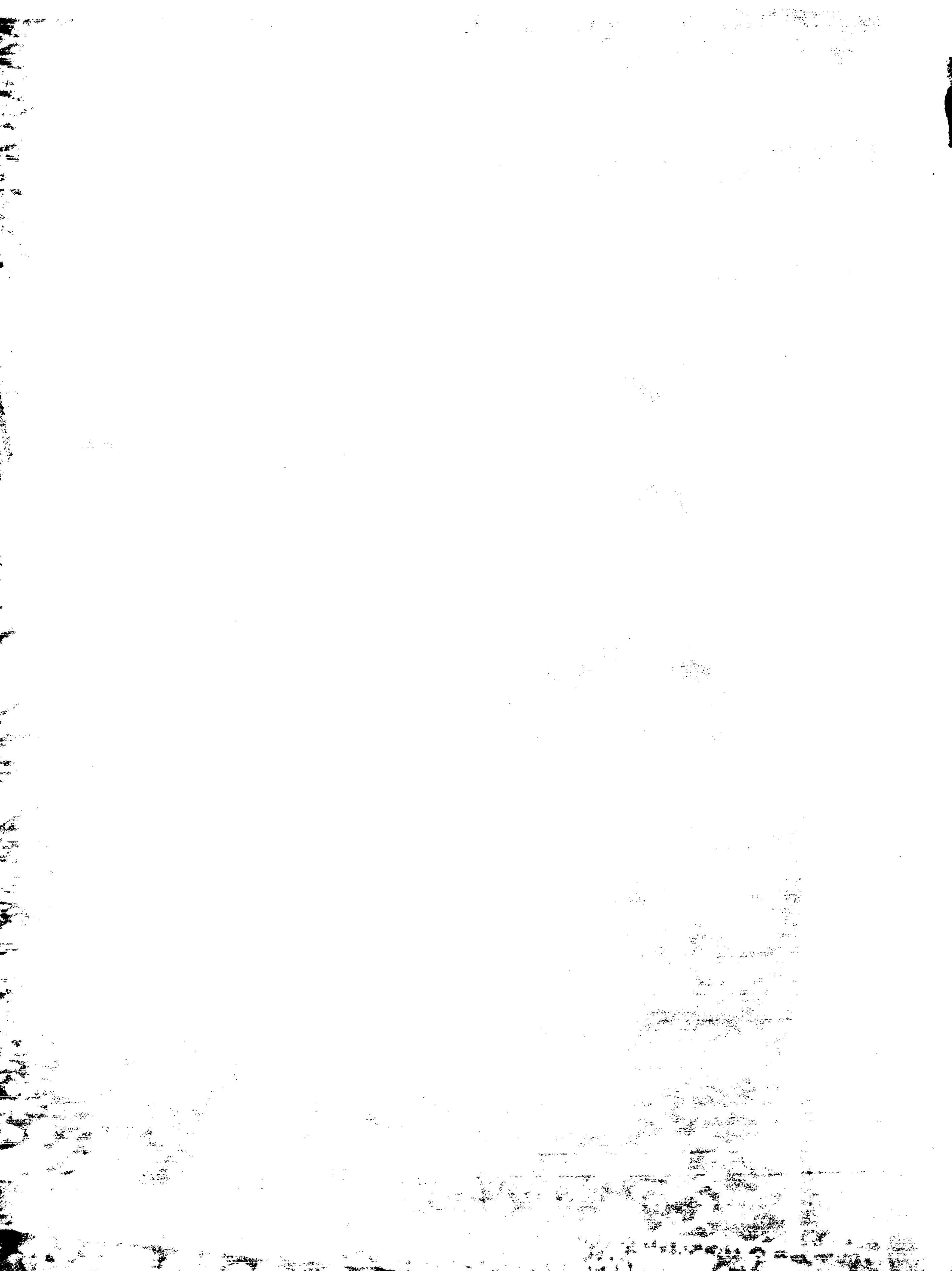

विदेशी मुद्रा अर्जन का सबल साधन—गलीचा उद्योग